विद्या ब्राह्मणमेत्याह शेवधिस्तेभवाम्यहम् ।
असूयकाय मां मादास्तथा स्यां वीर्यवत्तमा ॥

विद्या ब्राह्मण से यों कहती है मैं तुम्हारा ख़ज़ाना हूं, मुझे जुगै के रक्खो निन्दक तथा गुण में दोष निकालने वाले मत्सरी को मत बतलाओ ऐसा करोगे तो मैं तुम को अत्यन्त बीर्यवती हूंगी । छान्दोग्य ब्राह्मण में भी ऐसा ही कहा है ॥

विद्याह वै ब्राह्मणमाजगाम तवाहमस्मि त्वं मां पालय ।
अनर्हते मानिने नैवमादा गोपाय मां श्रेयसी तथाहमस्मि ।
विद्या सार्द्धं म्रियेत नविद्यामूषरे वपेत् ॥

कितने लोग ऐसे हैं जिन के मधुर कोमल शब्दों में मानों फूल झरते हों; श्रुति मनोहर उनके बदनाब्जनिःसृतपदावलियों के एक २ शब्द पर जी लुभाता है किन्तु कितने कटुबादी खल ऐसा अरुन्तुद बोलने वाले हैं कि वे जब तक दिन में दो चार बार मर्म ताड़न कर किसी का चित्त न दुखा लें तब तक उन्हें खाना नहीं हज़म होता । ऐसे दुष्टों का जन्मही इस लिये संसार में है कि वे अपने वाग् बज्र से दूसरों का हृदय बिदीर्ण किया करें । "अतीव रोषा कटुका च बाणी नरस्य चिन्हानि नरकागतानाम्" वाक् संयम इसीलिये कहा गया है कि कहीं ऐसा न हो कि कोई शब्द हमारे मुख से ऐसा निकल जाय कि उस से दूसरे के चित्त को खेद पहुंचे । शील के सागर कितने पुरुष रत्न चारु दत्त से चारु चरित्र ऐसे हैं जो अपना बहुत सा नुकसान सह लेते हैं पर लेन देन में कड़ाई के साथ नहीं पेश आया चाहते और न वे दूसरे का जी दुखाते हैं । निश्चय ऐसे लोग महा पुरुष हैं, स्वर्ग भूमि से आये हैं और स्वर्ग में जांयगे । जो परचित्तानुरंजन में लौलीन हैं उनके समकक्ष मनुष्यकोटि में ऐसे ही कहीं

कोई होंगे। यह परच्छन्दानुवर्तन दैवी गुण वहीं अवकाश पाता है जहां दर्प दाह ज्वर की ऊष्मा का अभाव है। अहंकारी को कभी यह बुद्धि होती ही नहीं कि हम किसी के चित्त को न दुखावें वरन परछिद्रान्वेषण ही में उसे सुख मिलता है। दूसरे की ऐब जोई को वह अपने लिये दिल बहलाव मानता है। अभिमान से देवदूत और फरिश्ते भी स्वर्ग से च्युत किये गये तब जिस में यह शैतानी खसलत है उसकी तुलना परचित्तानुरंजक के साथ क्योंकर हो सकती है। यह दर्पदाहज्वर धनवानों को बहुतायत के साथ सवार रहता है हमारा यह लेख उन्हीं के लिये विशेष रसाञ्जन है। निष्किंचन जो सामान्य मनुष्य के सामने भी गिड़गिड़ाया करता है उसको इस रसांजन की क्या अपेक्षा है॥

बहुत से ऐसे भी लोग हैं जिनकी चाल और ढंग कुछ ऐसा होता है कि उसे देख चित्त में बिषाद और कुढ़न पैदा होती है॥

यद्यपि कानो हानिः परकीयां रासभो चरति द्राक्षाम्।
असमंजसमिति मत्वा तथापि नो खिद्यते चेतः॥

किसी दूसरे के दाख के खेत को गदहा चरे लेता है हमारी यद्यपि इस में कोई हानि नहीं है किन्तु यह असमंजस सा मालूम होता है कि दाख के खेत को गदहा चरे डालता है यह समझ चित्त को खेद होता ही है। गर्वापहारी परमेश्वर की कुछ ऐसी महिमा है कि इस तरह के तुच्छ मनुष्यों को कोई ऐसा धक्का लग जाता है कि उनकी सब ऐंठन बिदा हो जाती है और तब वे राह पर आ जाते हैं। और तब भी जो सीधे रास्ते पर न आये उन्हें या तो बेहया कहना चाहिये या समझना चाहिये कि उनका कुछ और अमंगल होनहार है। सोने की नाई चरित्र की परख भी कसे जाने पर होती है। कसने से जो खरा और शुद्ध चरित्र का निकला वह लोक में प्रतिष्ठा और कदर के

लायक होता है और जो दगीला और खोटा निकल गया वह फिर किसी काम का नहीं रहता। समाज में सब लोग उस से घिन करने लगते हैं जो घिन के लायक हैं उनके जीवन से फल क्या ॥

कुसुमस्तवकस्येव द्वयी वृत्तिर्मनस्विनः।
मूर्ध्निहि सर्व लोकानां विशीर्येत बनेथवा ॥

चरित्रवान् मनस्वी फूलों के गुच्छा समान हैं फूल या तो सबों के सिर पर चढ़ेगा नहीं तो जहां फूला है वहीं कुम्हला के पेड़ के नीचे गिर पड़ेगा। कवि वर भवभूति ने भी ऐसा ही कहा है ॥

नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा मूर्ध्नि
स्थितिर्नचरणैरवताडनानि ॥

परचित्तानुरंजन के प्रकरण में इतना सब हम अप्रासङ्गिक गा गये पढ़ने वाले कहैं गे व्यर्थ की अलापचारी से यह पत्र की जगह छेक रहा है। सो नहीं परचित्तानुरजन चरित्र पालन का प्रधान अंग है जो दूसरे के चित्त को अपनी मूठी में कर लेना सीखे हैं और इस हुनर में प्रवीण हैं वें चरित्र वानो के सिरमौर होते हैं। "स्माइल्स आन क्यारेक्टर" में यही बात कई जगह कई तरह पर दर्साई गई है। पाठक आप भी यदि चरित्र वान् हुआ चाहो तो परचित्तानुरंजन में ध्यान लगाओ सो भी कदाचित् नापसन्द हो तो एक बार हमारे इस लेख को तो पढ़ लो। देव बाणी अंगरेज़ी के लेख पढ़ने की आदत पड़ रही है पिशाच भाषा हिन्दी का लेख पढ़ने में अपनी हतक समझते हो तो लाचारी है। हमारे भाग में करतार ने इसी पिशाचिनी की सेवा करना लिख दिया है तब क्या किया जाय ॥

स्काट्स इमलशन

यह सब महीने और सब ऋतु में खाने लायक है; भोजन के सदृश पोषक और दवा की दवा—

Always get the Emulsion with this mark —the Fishman—the mark of the "Scott" process

यह निर्बलों को बल देता है और पतले दुबले आदमी के शरीर में मांस पैदा कर मज़बूत और दृढ़ांग करता है। अंग प्रत्यंग जो ढीले हो गये हैं उनमें ताकत और फुर्ती लाता है। इसके सेवन से हड्डियां मज़बूत होती हैं और देह के भीतर पट्ठों में मज़बूती लाता है॥

यह रोगी दूधमुहे बच्चे को चंगा कर देता है और कमज़ोर बालकों को सहज़ोर। गर्भिणी और जिस के गोद में बालक है दोनो के लिये यह विशेष उपकारी है। इसलिये कि यह दूधमुहे बालक और मा जिसका दूध बच्चा पीता है दोनो को तनदुरुस्त रखता है॥

खांसी, ज़ुकाम, कफ, फेफड़े और गले की बिमारी, मन्दाग्नि और क्षीणता दूर करने वाली दवाइयों में इसके समान दूसरी दवा नहीं है और सदा गृहस्थी में रखने लायक है॥

लगातार सेवन से शरीर पुष्ट रह निश्चय बहुत तरह के रोगों से बचा रहता है। बालक से बूढ़े तक सब के लिये हित है। इससे नुकसान किसी तरह पर नहीं है। बड़े २ डाकृरों ने इसकी तारीफ की है। किसी तरह की बीमारी यह पास नहीं फटकने देता। आप अपने डाक्टर से पूछ देखिये। इसके ऊपर एक मनुष्य का चित्र है जो पीठ पर मछली लादे है और वह तुम्हें ज़रूर फाइदा पहुंचावेगा। यह हाथ से छू कर नहीं बनाया गया सब दवाखानों में मिलता है॥

स्काट ऐन्ड ब्रौन लिमिटेड

मेन्युफेक्चरिङ्ग किमिस्ट—लण्डन

हम अपना खोया हुआ महत्व पा सक्ते हैं ?

यत्न शील दृढ़ निश्चय के साथ उद्योगी को कौन सी बात दुष्कर है नूतन सभ्यता के अनुयायी तो यही पुकार रहे हैं कि उस महत्व को पुनः प्राप्त करने की एक मात्र उपाय "इङ्गलिसाइज़्ड" हो जाना है। जब तक हमारी किसी एक बात में लेश मात्र भी हिन्दुस्तानी पन बचा रह जायगा तब तक हम तरक्की न कर सकेंगे। इसका कारण भी वे लोग यह कहते हैं कि हिन्दुस्तान का गुलामी के साथ ऐसा चिरकाल का सम्बन्ध हो गया है कि जब तक हम अपने को हिन्दुस्तानी मानते रहेंगे तब तक गुलामी का खयाल हम से दूर न होगा। आर्य समाजी कहते हैं जब तक देश में पोपलीला कायम रहेगी तब तक हमारा उद्धार न होगा, कुल देश का देश आर्य समाज में आ जाय अभी तरक्की होती है। ब्रह्म समाज वाले पुकार मचाये हैं कि देश में सब लोग पौत्तलिकता छोड़ एक ईश्वर के मानने वाले हो जांय तो देश उन्नति के सोपान पर चढ़ जाय। सनातन धर्मावलम्बी पुकार मचाये हैं, यह कलियुग है लोगों ने अपना धर्म कर्म छोड़ दिया अब हम दिन २ नीचे ही को गिरते जांयगे। घोर कलियुग आ जाने पर कलंकी अवतार होगा तब फिर से सतयुग जब आवेगा तब हमारी उन्नति होगी इत्यादि अपने २ मतलब की लोग गीत गा रहे हैं। किन्तु यह किसी को नहीं सूझती कि न जानिये कितने तरह के कोढ़ हमारी आर्य जाति को घेरे है उसे हम जब तक न अपने में से हटावेंगे तब तक आगे बढ़ने की चेष्टा सब व्यर्थ होगी। सौबार की गाई गीत को बार २ उद्धरनी से लाभ क्या। पहिले के महत्व को फिर पाने के लिये जातीयता का आना बड़ा आवश्यक है, हमारी प्रचलित रीति नीति बाल्य विवाह इत्यादि उस जातीयता कौमीयत की बड़ी बाधक है बिना उस के छोड़े हम सैकड़ों बार कानग्रेस करते रहें, तालीम के अन्तिम छोर तक पहुंच जांय कुछ न होगा॥

पुस्तकों की परीक्षा।

मल्लिका देवी वा बङ्ग बासिनी

श्री किशोरी लाल गो स्वामी अपने उपन्यास प्रेमियों को ऐतिहासिक उपन्यास प्रकाश कर क्रम २ से हिन्दुस्तान के ऐतिहासिक वृत्तान्तों से बहुत कुछ आगाह कर रहे हैं। यह उपन्यास भी बंग देश के एक समय की घटना केआधार पर लिखा गया है। जब दिल्ली के तख्त पर नेक नाम गयासुद्दीन बलबन विराजमान था उसका भेजा हुआ सूबेदार महा ज़ालिम तुगरल खां ने बंगाले के शासन की बाग डोर अपने हाथ में ले लिया था बस उसी के ज़ालिमाना बर्ताव का बंग देश की प्रजा पर जो असर हुआ है उसी का बर्णन इस में है जिसे पढ़ तरह २ का भाव चित्तमें उपजता है, उपन्यास अति रोचक है मूल्य १॥)

तरुण तपस्विनी वा कुटीरवासिनी।

इस उपन्यास को किसी कदर गद्य काव्य कहैं तो अनुचित न होगा। गोस्वामी जी ने इस उपन्यास के लिखने में कहीं२ पर बाणकवि की कादम्बरी का तर्ज़ लाने में कुछ कोर कसर नहीं रक्खा। उपन्यास रसीली तबीयतवालों के पढ़ने योग्य हैं। ये दोनो उपन्यास श्री किशोरी लाल गोस्वामी ज्ञान बापी के पते से मिलेगा॥

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ | सं० ७ — प्रयाग — जुलाई सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज ३)

—:००:—

हिन्दीप्रदीप

जि० २८ सं० ७ | प्रयाग | जुलाई सन् १९०६ ई०

दौड़ धूप STRUGGLE

दौड़ धूप का दरजा कहां तक बढ़ा हुआ है इसका अन्त पाना सहज नहीं है । सच पूछो तो संसार में हमारा जीवन सब का सब या कुछ हिस्सा इस का केवल दौड़धूप है और अब इस अंगरेज़ी राज में तो इस दौड़धूप का अन्त है । दौड़ धूप अपनी हद्द को पहुंची हुई है। घर में जै प्राणी होंगे सब मिल कर यथोचित दौड़ धूप Sruggle करते रहैंगे तभी चलेगा नही तो पहिया रुक जायगी। वर्तमान् शासन की प्रणाली ने हमारे नेत्र खोल दिये-भारत का अब वह समय दूर गया जब एक आदमी कमाता और दश प्राणियों का पूरा २ भरण पोषण करता रहा। अब उन दस प्राणियों में नौ कमाते हों एक किसी कारण अपाहिज या निकम्मा

निकल गया तो उसका कहीं ठिकाना नहीं। दूसरा कारण एक यह भी मालूम होता है कि देश में धन रह न गया और Allurements मन को लुभाने या फुसलाने वाले चित्ताकर्षक पदार्थ इतने अधिक हो गये हैं कि उन्हें देख जी लुभा उठता है- विना उन्हें खरीदे जी नहीं मानता न खरीदो तो अपने आराम और आसाइश में फर्क पड़ता है। जिस गृहस्थी का पालन पोषण साथ आराम के १० रुपया महीने की आमदनी में होता था वहां अब हर एक जिन्स के मंहगे हो जाने से २५) महीने की आमदनी पर भी नहीं चलता। इस दौड़ धूप में एक दूसरे के मुकाबिले आगे बढ़ जाने की चेष्टा जिसे अंगरेज़ी में "कंपिटीशन" और हमारी बोल चाल में हिसका या उतरा चढ़ी कहेंगे कोढ़ में खाज के समान है। इस उतरा चढ़ी में बहुत से गुण हैं पर कई एक दोष भी इस में ऐसे प्रवल हैं जिस से हमारी बड़ी हानि हो रही है। एक ही बात के लिये दो प्रतिद्वन्दियों के होते आपस में दोनों की उतरा चढ़ी C mpetition होने पर दोनों जी खोल कोशिश करते हैं जो कृतकार्य होता है उस के हर्ष की सीमा नहीं रहती। हमारे अपढ़ रुपये वाले जिन्हें न इतनी अकिल न हिम्मत न शऊर की बाहर निकल क़दम बढ़ावें घर के भीतर ही रहा चाहें इस उतरा चढ़ी में आय आपस में कट मरते हैं। अफीम भांग इत्यादि के ठीकों में ऐसा बहुधा देखा जाता है। इन अहमकों की उतरा चढ़ी में प्रजा का धन खूब लुटता है। विदेशी राजा ठहरा कर्मचारी ऐसी हिकमत काम में लाते हैं कि उतरा चढ़ी में इन महाजनों का टेंडर हर साल बढ़ता ही जाय। ऐसाही दो धनियों में आपस की स्पर्द्धा हो गई तो दोनों छार में मिल जाते हैं। दो विद्यार्थियों में स्पर्द्धा का होना दोनों के लिये बहुत उपकारी है। एक दूसरे में स्पर्द्धाही से यह संसार चल रहा है संसार या संसृति के माने ही दौड़ धूप है और दौड़धूप की अन्तिम सीमा प्रतिस्पर्द्धा या उतराचढ़ी है। कुलीनता का घमण्ड

दूसरे प्रतिस्पर्द्धा इन दोनों से हमारी समाज जर्जरित होती जाती है। व्याह शादियों में करतूत का बढ़ जाना जिस से बहुधा लोग कर्ज़दार हो बिगड़ जाते हैं यह सब इसी उतरा चढ़ी का प्रतिफल है। उतरा चढ़ी "कंपिटीशन" न हो तो केवल दौड़धूप Struggle को बुरी न कहेंगे। इधर हिन्दुस्तान का अधःपात आलस्य और सुस्ती ही से हुआ जब तक देश रंजा पुजा था लोग हाथ पर हाथ रक्खे पागुर करते बैटे रहे। विलायती पंप के द्वारा जब सब रस खिच गया तो अब चेत आई भांत २ की दौड़-धूप में लोग अब इस समय लग रहे हैं पर वह पंप ऐसा तले तक गड़ गया है कि हमारी दौड़धूप का भी सरांश उसी पंप में खिच जाता है। हां इस कदर दौड़धूप करने से पेट अलबत्ता पाल लेते हैं। इतना परिश्रम न करैं तो कदाचित भूखों मर जांय। धन्य भारत के वे दिन जब शान्ति देवी के उपासक हमारे ऋषि मुनि अपने पुण्याश्रम में आध्यात्मिक चिन्तन में अपना काल बिताते हुये दौड़धूप और फिकिर चिन्ता का नाम भी नहीं जानते थे। भारत की परम उन्नति का समय वही था॥

शिष्य की परख।

यह कथानक महा भारत के आदि पर्व का है जिससे प्रगट होता है कि हमारे यहां शिष्यों में कैसी गुरुभक्ति होती थी। इन दिनों स्कूलों में पढ़ने वाले जो धृष्टता और गुस्ताखी के पूर्ण अवतार होते हैं इसे पढ़ कुछ तो शरमांय और आगे को अपने सुधार के लिये इसे उदाहरण मानै॥

एक वार उपाध्याय आयोद धौम्य ने अपने शिष्य उपमन्यु से कहा बेटा उपमन्यु तुम हमारी गौओं को चराय लाया करो-उपमन्यु गुरू की आज्ञा मान दिन भर गौवैं चराय सांझ को बन से लौट गुरू को आके प्रणाम किया। गुरू ने उपमन्यु को हृष्ट पुष्ट और दृढ़ांग देख कहा वत्स उपमन्यु तुम दिन भर गौवैं चराते रहे क्या खाया

जो हृष्ट पुष्ट और दृढ़ांग बने हो तनिक भी नहीं कुम्हलाने इसका क्या कारण है? ॥

उपमन्यु--गुरू जी आप की गौवें चराया बीच में भिक्षा भी मांग लाये उसी को खाया ॥

गुरू--तुम ने बड़ा अन्याय किया जो भिक्षा बिना हमे निवेदन किये खा लिया। ऐसा न किया करो। दूसरे दिन उपमन्यु भिक्षा लाय सब की सब गुरू के अर्पण कर दिया। सांझ को गौवें चराय बन से लौट गुरू को आके प्रणाम किया। इसे वैसाही हृष्ट पुष्ट और दृढ़ांग देख गुरू ने पूछा। उपमन्यु हमने सब की सब भिक्षा लै लिया तौ भी तुम मोटे ताज़े और मज़बूत हो सो क्यों ?।

उपमन्यु-पहली भिक्षा लाय आप को दै दिया फिर मांग लाये उसी को खाय आप की गौवें चराते रहे ॥

गुरू-यह भी तुम ने अन्याय किया इस से तो दूसरे २ भीख मांगने वालों की बड़ी हानि हुई। प्रतिदिन ऐसा ही दोदो बार भिक्षा मांगा करोगे तो भीख देने वालों को अश्रद्धा हो जायगी। तो तुम मानो भिक्षा देने के क्रम ही को बन्द किया चाहते हो। ऐसा करने से तुम्हें सब लोग लोभी कहेंगे। दूसरे दिन फिर उपमन्यु सांझ को बन से लौट गुरू को आयके प्रणाम किया ॥

गुरू-तुम तो वैसा ही मोटे ताज़े बने हो। हमने तुम्हारी सब की सब भीख लै लिया और फिर मांगने का निषेध कर दिया तब क्या खा कर रहे ? ॥

उपमन्यु-उन्ही गौओं का दूध पी उन्हे चराते रहे?।

गुरू-यह तो बड़ाही अन्याय है। हमारी आज्ञा के बिना तुमने क्यों दूध पिया। ऐसा मत किया करो ॥

उपमन्यु-बहुत अच्छा। अब ऐसा न करूंगा। दूसरे दिन बन से लौट

फिर गुरू को आके प्रणाम किया ॥

गुरू–दूध पीने को हम ने मना कर दिया, भीख मांगने की हमारी आज्ञा न थी तब क्या खाया जो मोटे ताजे बने हो ॥

उपमन्यु–ये बछड़े दूध पीते समय जो फेन मुह से गिराते रहे उसी को पी कर रहा ॥

गुरू–ये बछड़े बड़े गुनवान हैं, तुम्हें फेन पीते देख दूध आप न पियेंगे दया का भाव मन में लाय दूध को फेन बनाय तुम्हारे लिये गिरावेंगे तब तुम उन बछड़ों का हक़्क पी पापी बनोगे। ऐसा मत किया करो। दूसरे दिन फिर उपमन्यु गौवें चराने को गया। अब यह भूख से पीड़ित हो न भीख मांग सका न दूध पीने की आज्ञा थी न फेन ही पी सका तब मदार के पत्तों को खा कर दिन बिताया। मदार अत्यन्त गरम कडुआ और रूखा होता है उसके खाने से यह अन्धा हो गया। गौवों को चराय घर लौटते समय रासते में कुंआ में गिर पड़ा। सांझ को सूर्य अस्त होने पर भी जब न आया तब गुरू ने उस के साथ के पढ़ने वालों से पूछा उपमन्यु अब तक क्यों न आया। उन्हों ने कहा गौवें चराने गया है। (थोड़ी देर प्रतीक्षा कर) जान पड़ता है रूठ गया चलो उसे ढूढ़ैं उपाध्याय आपोद धौम्य शिष्य समेत इसे ढूढ़ने चले। बन में सब ओर पुकारते फिरे। उपमन्यु अपने गुरू की आवाज़ पहिचान बोला भूखा हो मैं मदार का पत्ता खा कर रहा सो अन्धा हो गया आवते समय कुआं में गिर गया हूं। गुरू ने कहा तुम अश्विनी कुमार की स्तुति करो वे देवताओं में वैद्य हैं तुम्हारी आंख अच्छी कर देंगे अन्धत्व जाता रहेगा। गुरू के कहने से उपमन्यु ने अश्विनी कुमार की स्तुति किया और इसका अन्धत्व मिट गया पीछे गुरू ने भी इसे आशीर्वाद दिया समस्तवेद और धर्मशास्त्र तुम्हें आजाय और मनुष्य के लिये जो २ अभ्युदय और कल्याण की बातें सब तुम्हें प्राप्त हों।

गुरू में शिष्य की अचल और दृढ़ भक्ति तथा गुरू का शिष्य पर

अटल प्रेम और छोह दोनो इस कथानक का सारांश है। अब तो अंगरेज़ी स्कूलों के जारी होने से तालीम का कुछ ढंग ही पलट गया। विद्या दान में सर्कार की ओर से जैसी कड़ाई है और कर्मचारियों की जैसी कुदृष्टि हमलोगों की शिक्षा की ओर है उस से स्पष्ट है कि कुछ दिनों में वेही पढ़ सकेंगे और उतम शिक्षा पा सकगे जो सुसंपन्न और खाने पीने से दुरुस्त हैं। अच्छे उस्ताद तो अब भी शालीनता गुण विशिष्ट शिष्य को पहचान लेते हैं और जी खोल उसे बताते हैं। इस विद्या विक्रय के समय में भी अच्छे सुयोग्य अध्यापक शिष्य के सद्गुण की भरपूर परख कर लेते हैं। हमारे प्राचीन समय में जब विद्या का क्रय विक्रय नहीं होता था तब वही क्रम विद्योपार्जन का था और उन की पढ़ाईविद्या तब इसी से अयातयाम होती थी॥

भारत में जनसंख्या और दरिद्रता की बढ़ती।

हिन्दुस्तान समस्त संसार की एक छोटीसी प्रतिकृति है। यूरोप के ५ प्रबल साम्राज्य Five great powers में इङ्गलैण्ड इस समय जो सबों में प्रधान समझा जाता है सो इसी लिये कि हिन्दुस्तान उसके अधिकार में है। इसकी लम्बाई चौड़ाई तथा यहां की नित्य बढ़ती हुई जन संख्या से यही बोध होता है कि यह एक Continent महाद्वीप है। बङ्गाल पंजाब गुजरात आदि इस के एक २ बड़े देश हैं। भिन्न २ देशों के खानिक द्रव्य आदि अत्युष्ण तथा अति शीतल कटिबन्ध के निवासियों के शरीर का ग्रथन तथा उन कटिबन्धों के जल वायु की पैदावार और वहां २ के बनस्पति या जीव जन्तु आदि यावत् प्राकृतिक रचना सब का चित्र यहां विद्यमान् है जिस से साबित है कि समस्त संसार का भारत एक छोटा सा नकशा है। पर आबादी और निर्धनता में यह सब देशों में आगे बढ़ा है। यहां की इतनी चढ़ी बढ़ी जन संख्या दरिद्रता का दुख झेलती जितनी भावी उन्नति और आशा सबों को निर्मूल कर रही है। एक वह समय था जब हमारे आर्य पूर्व पुरुष "गोत्रन्नोवर्द्धताम्" की

प्रार्थना करते थे-सन्तान और परिवार की वृद्धि तथा बहुप्रज होना भागवानी की सीमा समझी जाती थी अब इस बढ़ती हुई जन संख्या में बड़ा अभागा वही है जो बहुप्रज है, जीते जी नरक की यातना वही भोग रहा है जिस के बहुत से लड़के हैं। देश के कल्याण की अनेक बातों में औलाद का कम होना भी है-एक हमारे मित्र का यह कथन हमे बहुत ही रुचा और समयानुकूल जंचा कि "मनुष्य आधा तब मरता है जब अपनी स्वच्छन्दता गवांय जान बूझ बेड़ी पावों में छोड़ ब्याह करता है और पूरा तब मरता है जब औलाद उस के पैदा होने लगती हैं" भारत के सुदिन तभी आ सक्ते हैं जब इस खयाल के एक भी न रहैं-जिन के मत में मनुष्य के जीवन की सफलता इसी में है कि एक२ आदमी के बेशुमार औलाद पैदा हो और औलाद निरी दूध मुही रहे तभी ब्याह दी जाय। कबूतर या मुर्गियों की भांत उन के भी जल्द २ बच्चे पैदा हों दासत्व की शृङ्खला से जकड़े हुये वे क्या खांयगे कैसे अपना दिन बितावेंगे इसका कुछ खयाल नहीं। हमारे सभ्य समाज वाले प्रति वर्ष कानग्रेस करते हैं अनेक कानफेरेन्स के द्वारा समाज का संशोधन किया चाहते हैं। प्रजा में नव जीवन के दान से उन्हे उच्च श्रेणी में उठाया चाहते हैं। किन्तु इस पर किसी का ध्यान नहीं जाता कि औलाद कम पैदा हुआ करे और देश में जन संख्या घटै। ब्रह्मचर्य की प्रथा स्थापित कर दस की जगह एक ही दो सन्तान हों पर वे सिंह के छौने निकलैं "सहैव दशभिः पुत्रैर्भारं वहति गर्दभी" को चरितार्थ होने का मौका न मिले। ऐसे लोग बहुत हैं जिन्हें बड़े से बड़े राज के इन्तिज़ाम का हौसिला है और जो उन्हें सौंपा जाय तो अच्छी तरह कर गुज़रै पर घर के इन्तिज़ाम का बिल्कुल शऊर उन्हे नहीं है। घर के बड़े २ काम जिन से हमारे में कौमीयत आने की आशा है घरवाली के हाथ में रख दिया गया है। इतना "मारल करेज" कहां से लावें कि अपनी घरवाली की गुलामी से बर तरफ हों। गृहस्थी में लड़की लड़कों का ब्याह बहुधा उन्ही के

अनुसार होता है। कालिदास ज़ीट उड़ाने के ढङ्ग पर कुमार संभव में लिखते हैं "प्रायेण गृहिणीनेत्राः कन्यार्थेषु कुटुम्बिनः" बहुधा कुटुम्बी कन्या के बिबाह इत्यादि में गृहिणीनेत्र होते हैं अर्थात् अपनी घरवाली के कहने के अनुसार चलते हैं-इस से सिद्ध है कालिदास के समय से यह बुराई प्रचलित है। अपने घर का इन्ति-ज़ाम मुल्क के इन्तिज़ाम के बराबर है। मसल है अपने घर में दिया बाल तब मसजिद में बालना होता है जो अपने घर का इन्तिज़ाम न कर सके वे हुकूमत का इन्तिजाम क्या करेंगे। पति सेवा और पतिव्रत की बहुत कुछ महिमा हमारे शास्त्रों में गाई गई है पर पत्नी सेवा व्रत हमारी इन दिनों की सभ्य समाज ही में पाया जाता है। यह उसी का परिणाम है कि बाहर बड़ी लम्बी चौड़ी वक्तृता और लेक्चर हम झाड़ते हैं पर घर में पहुंचते ही जहां देहली के भीतर पांव रक्खा कि सब जोश उतर जाता है। पत्नी सेवाव्रत की दीक्षा लिये हैं हिम्मत नहीं कि मुह खोल सकैं। बाहर बिधवा विबाह के लिये और बाल्य बिवाह उठाने को बड़ी सर गरमी और जोश दिखाते हैं घर में जो कहीं यह बात ज़बान पर आजाय तो मुये के चांद का बाल भी नोच लिया जाय और सिर पर इतनी चटकाई जाय कि चांद खुजलाते २ खोपड़ी गञ्जी हो जाय। इत्यादि अनेक कितनी बातें हैं जिस से हमारी जर्जरित समाज जन संख्या की बाढ़ के साथ हमारी दरिद्रता और मुफलिसी को बढ़ा रही हैं। बाहर दिखाने को हम सब तरह की तरक्की कर रहे हैं पर घर के भीतर उसका कुछ भी असर नहीं पहुंचा न कभी पहुंचेगा। ५० वर्ष पहले जो कुरीतियां और कुसंस्कार हमलोगों में थे वे आज भी वैसेही टटके बने हैं और वे सब हमारी दरिद्रता के बढ़ाने के सहकारी हो रहे हैं; उस में सब से प्रधान बहुत सी औलाद का होना है॥

फिजूल खरची ।

हमारे नये सुशिक्षितों में यह फिजूल खर्ची संक्रामक रोग या कोई बड़े पातक सदृश फैली हुई है। बड़े रुपये वालों ही में यह बीमारी महदूद रहती तहां तक कोई हर्ज न था बरन मध्यम श्रेणी वाले या छोटे दरजे के लोगों में भी यह फैली हुई है। "यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। सयत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते" श्रेष्ठ और उत्तम श्रेणी के लोग जैसा आचरण करते हैं वैसाही नीचे दरजे के लोग करने लगते हैं ऊपर के दरजे वाले जिसे प्रमाण में रखते हैं छोटे लोग उसको अपने लिये प्रमाण में मानाही चाहें। एक ओर यहां के आय का बन्द होना और देश में धन का घाटा होते जाना दूसरे ओर अंगरेज़ी राज की अनेक प्रकार की फिजूल खर्चियों का बढ़ जाना कितना हमारे लिये हानि कारक हो रहा है। यही कारण है कि लोग इस समय पुराने क्रम के अनुसार दियानतदारी के साथ थोड़ी आमदनी से रुपया कमाते और खर्च में किफाइत करते हुये कालान्तर में धनी हो जाने की आपेक्षा यही चाहते हैं कि कैसे एकबारगी बड़े रुपये वाले हो जांय। इस ढङ्ग से एकबारगी धन मिल जाने का तरीका जुआ या जुआ चोरी अथवा किसी को ठगना या धोखा देना है। बड़े २ नगरो में तो इसकी बहुत हीं ज़ियादती है जैसा लण्डन पेरिस हिन्दुस्तान मे कलकत्ता और बम्बई किन्तु साधारण रीति पर शहर मात्र में इसका बहुत प्रचार है; नगर की अपेक्षा ग्राम में इस की कमी अलबत्ता कही जा सक्ती है। व्यय हमारे पहनावे में सब से अधिक बढ़ रहा है, साधारण रीति पर नज़र फैला कर देखो तो अंगरेज़ी फेशन ने ऐसा पांव फैला रक्खा है कि जिस में देखो और जहां देखो सब में उसे टांग अड़ाए हुये पाओगे इन दिनों बहुधा लोग ऐसे तर्ज़ पर अपना जीवन चला रहे हैं जो तर्ज़ उन की औकात के बाहर है। अंगरेज़ी शासन का इसे छुछकपन कहैं या बरकत अथवा शाप Blessing or curse "अधोधः पश्यतः

कस्य महिमा नोपचीयते । उपर्युपरि पश्यन्तः सर्वं एव दरिद्रति" हमेशा अपने से हर एक बात मे कमवाले के साथ अपनी होड़ करे । ऐसा करने से हम ईश्वर का धन्यबाद देंगे कि भगवान् की हम पर कृपा है । वह हमे अमुक मनुष्य से अच्छी दशा में रक्खे है। इसे एक जून झूरी रोटी खाने को मिलती है हम सुबह शाम दोनों वक्त दूध मलाई चाबते हैं । पर अपने से ऊपर दरजे वाले के साथ अपना मिलान करने वाले सब लोग दरिद्र रहते हैं । इस लिये कि जब वह अपने से अधिक वाले के साथ अपनी होड़ करेगा तो उस के मन में हसद ओर ईर्षा पैदा होगी। ईर्षा की ज़िन्दगी कभी सुख से नहीं कटती । दूसरे यह कि हमे ४ रुपये की समाई है दूसरा जिसे १०) रु० की समाई है उस के साथ हम अपनी बराबरी करेंगे तो कुछ दिन में सब गवांय खुक्ख हो भूखों मरने लगेंगे । हिन्दुस्तान की इस समय ठीक यही दशा है । जिन्हे हम बड़े धनी समाई और पूंजी वाले समझे हुये हैं वे भी भीतर २ पोले हैं । ऊपर दिखाने को ऐसे ठाठ से रहते हैं कि देखने वाले का बड़ा ऊंचा खयाल हमारी ओर जमा है । हुंडी पर हुंडी पीटते बराबर मिती चढ़ती जा रही है जब देखा अब नहीं चलाये चलता टाट उलट दीवाला पीट बैठ रहे । अदालतों में आधे मुकद्दमे दिवालियों पर डिगरी जारी के और जाल फरेब के रहते हैं तो आधे में और सब क़ानूनों की अनेक तरह की पेचीदगी के होते हैं । पहिले नौवाबी में नोच खसोट की डर से लाखों रख कर भी सब लोग बनियों की तरह फटे हालत से रहना पसन्द करते थे अब इस समय अंगरेज़ी स्वास्थ्य में बनिये भी शाह बनते हैं; भीतर पोले हों पर ऊपर से अपने को रंजे पुजे न दिखलावें तो प्रतिष्ठा की हानि रहे । मक्कारी अब तक धर्म सम्बन्ध में रही अब धन और रुपयों में भी मक्कारी ने आय पांव फैलाया । समाई हो चाहो न हो पर रहन सहन का एक तर्ज़ Style होनाही चाहिये । रहने को साफ सुथरा वसीह मकान चाहिये; मकान हुआ तब दस्तर खान में हम पियाले

वाले दो चार दोस्त क्यों न हों; फिर गाड़ी घोड़ा रहना ही चाहिये; हैसीयत के माफिक काम काज किया चाहें; सर्कारी चन्दा किसी किस्म का आ गया तो उसमें भी शरीक न हों तो कर्मचारी नाराज़ हों। तात्पर्य यह कि एक की आमद दो का खर्च साफ़ ज़ाहिर किये देता है कि जब तक हेर फेर न करैं और निरी इमानदारी पर निर्भर रहैं किसी तरह नहीं चल सक्ता। ऐसाही एक दूसरी श्रेणी फिजूल खर्चियों की और भी है। जैसा हैं तो बिल्कुल मुफलिस कल्लांच और दरिद्र पर चाहते हैं कि समाज में हमें सब लोग धनी मानै। अपने सब काम और करतूत उन्ही के बराबर की करैं जैसा सामर्थि वाले करते हैं। उन के खयाल में यही धसा हुआ है कि हम भीतर चाहो जैसे हों पर रहन सहन पहिन।वे और फेशन परस्ती में किसी से पीछे न रहैं और इसी को वे बड़ी लियाकत और प्रतिष्ठा मानते हैं। चाहो वह बिल्कुल बनावट नुमाइश और दम्भ हो पर बाहर वाले उन्हें सम्पन्न और खाने पीने से दुरुस्त समझे रहैं। चलन सी हो गई है कि लोग हमेशा अपनी ग़रीबी के छिपाने की कोशिश में रहते हैं इस लिये सदा कर्ज़दार रहते हैं। ऐसे लोग़ दावतों में और व्याह शादी में सैकड़ों खर्च कर डालते हैं पर दावत का जितना सामान सब उधार रहता है। यार दोस्त भाई बिरादरी जमा हो उस बेवकूफ को झूठी तारीफों से खुश कर दावत खापी रवाना होते हैं। पीछे मुसीबत उसी अहमक के सिर आ पड़ती है Fools make feast and wise men eat them " बेवकूफ दावत करते हैं अकिलमन्द दावत खाते हैं यह कहावत ऐसोंही के लिये कही गई है। नाक की लाज का निबाहना ऐसी भारी बुराई हमारी समाज को दबाये हुये है कि गृहस्थ हज़ारों कमाता हुआ भी नहीं पनपने पाता। गरदन चाहो कटजाय पर नाक न कटै इस समझ को कैसे उन से कोई दूर करै। ऐसों ही को कर्ज़ अज़दहा बन निगल लेता है और फिर जन्म भर उस से उनका छुटकारा नहीं होता॥

फिजूल खर्ची की आदत पड़ जाने से फिर छुटाये नहीं छूटती। ईश्वर न करे अपव्ययी खरच करने की आदत में पड़ा हुआ सुबीते वाला हो पीछे दरिद्र हो जाय। ऐसा मनुष्य एक तरह पर जीते ही मृतक तुल्य है। अच्छा कहा गया है।

सुखं हि दुः खान्यनुभूय शोभते घनान्धकारेष्विव दीप दर्शनम्।
सुखेन यो याति नरो दरिद्रतां धृतः शरीरेण मृतः स जीवति।

यह श्लोक मृच्छ कटिक में खर्च करते २ दरिद्र हो जाने पर चारुदत्त के सम्बन्ध में कहा गया है। पहिले दुःख झेल पीछे सुख भोगना सोहता है पर धनवान् रह पीछे जो दरिद्र निष्किंचन हो जाता है वह शरीर धारण किये हुये भी मानो मरा हुआ है। सुनने में आता है लखनऊ और दिल्ली में अब भी कितने ऐसे फिजूल खर्च चटोरे हैं कि कपड़े बेंच मिठाई खाते हैं। यह भी एक प्रकार का नशा है सबेरे से सांझ तक में जब तक रुपया दो रुपया उड़ा न लेंगे तब तक उन्हे कल न पड़ेगी। हमारी समझ में तो जुआ के समान यह भी एक दुर्व्यसन है मुफ्त खोर दूसरों के माल पर चैन उड़ाने वाले ऐसों को खूब ठगते हैं। अपनी चाप लूसी के ढर्रे पर उसे फसाय थोड़े दिन में उसका सर्वस्व गटक बैठते हैं॥ डाक्टर जानसन का मत है कम खर्ची आदमी को जल्द स्वच्छन्द कर देती है। ठीक है जो किफायत से चलता है उसका सदा रुपया जमा करने की ओर लक्ष्य रहता है। जो रुपये वाला और सब भांत पुष्ट है वह स्वछन्द रहा चाहे इस लिये कि वह रुपये पैसे के लेन देन में किसी से दबा नहीं है तब वह क्यों किसी की मातहती पसन्द करे। अपव्यय करने वाले को तो हर जून रुपये का तरद्दुद रहता है तब न जानिये कितनों का बाधित सदा पराधीन उसे रहना पड़ता है।

———

सम्पादकीय विचार॥

लार्ड रिपन महोदय नगर२ में म्युनिसिपालिटी इस लिये स्थापित कर गये थे कि हमलोगों में आत्म शासन का माद्दा आवे न कि इस लिये कि म्युनिसिपालिटी चुङ्गी आदि अनेक टैक्सों के ज़रिये हलाकू और चङ्गेज़ खां की ताई और चाची बन बैठें। चुङ्गी और दूसरे २ अनेक हलाक करने वाले टेक्सों से जब इसका खर्च न पुरा तो "हौस टैक्स" घर दुआरी लगाई गई अब इतने पर भी म्युनिसिपलिटी को घाटाही रहा तब मिरचा हींग आदि कई छोटी जिन्सों पर चुङ्गी घटाय घी पर चुङ्गी बढ़ा दी गई है। उस पर सन्तुष्ट न हो मेम्बरान म्युनिसिपालिटी ने अब गायभैंसबकरी आदि जानवरोंपर टैक्सलगाया चाहते हैं ? प्रतिदिन गो धन की देश में कमी होने से दूध घी महा महगा होता जाता है अब यह "क्यटिल टैक्स" क्या किया चाहता है ? क्या मेम्बरान म्युनिसिपल यही चाहते हैं कि दूध घी लोगों को मयस्सर न हो ? म्युनिसिपलिटी क्यों बहुत सा फिजूल खर्च बढ़ाये है कि उसका घाटा नहीं पुरता। सेना विभाग इत्यादि में गवर्नमेंट की फिजूल खर्ची का म्युनिसिपलिटी क्यों अनुकरण कर रही है ? गवर्नमेंट तो विदेशी है तब वह हर एक बहाने अपना पेट भरा चाहे उसे हिन्दुस्तान का रुपया व्यर्थ खर्च करते क्यों मोह और अकरास हो। म्युनिसिपलिटी का सिद्धांत आत्मशासन है तब उसे फिजूल खर्ची के रोकने ही में भलाई है।

—:o:—

पूर्वीय बङ्गाल के नये छोटे लाट फुलर साहब ने जब देखा कि अब हमारी कोई कला नहीं लहती तब यह उपाय निकाला कि मुसल्मानों को हिन्दुओं के विरुद्ध उठाया चाहते हैं। सर्कारी नौकरियां हिन्दुओं के मुकाबिले पहिले मुसल्मानो को दी जांयगी तो इस में हिन्दू और मुसल्मान दोनो में स्पर्द्धा और विरोध अवश्यमेव बढ़ैगा और बङ्गाली लोग जो एका एका चिल्ला रहे हैं और स्वदेशी की धूम मचाये हैं उस में कुछ न कुछ बाधा अवश्य पड़ेगी। पालिसी इसी को कहते हैं।

हमारी तरक्की की अनेक बाधाओं में कर्मचारियों की पालिसी भी एक है ॥

—:०:—

हमे अपनी हिन्दी की प्रतिदिन उन्नति देख बड़ा हर्ष होता है अब इस समय इसके बहुत अच्छे २ प्रौढ़ लेखक हर एक प्रान्तों में तैयार होते जाते हैं। बहुधा प्रत्येक नगर से साप्ताहिक कहीं २ मासिक दो एक पाक्षिक और दैनिक भी निकल रहे हैं। जिन्मे हर एक तरह के उत्तम से उत्तम प्रौढ़लेख निकलते हैं। साप्ताहिकों में लखनऊ से आनन्द हास्य रसपूर्ण बहुत अच्छा निकलता है और लाहौर से स्वदेशबन्धु। इस के संपादक राजकीय विषय में बड़ी स्वच्छन्दता के साथ लिखते हैं आशा है इस के ग्राहक बहुत जल्द बढ़ जांयगे और यह उत्तम श्रेणी के पत्रों में गिना जायगा ॥

——

हिन्दू कालेज के लड़कों को स्वदेशी आन्दोलन में शरीक न होने देने की भूल को श्रीमती एनी विसेंट हर तरह पर तोपा चाहती हैं पर वास्तव में यह उन से नहीं बन पड़ा और इस से बहुतों को उनकी ओर से अश्रद्धा और खटक हो गई है। स्कूल और कालेजों के लड़के पोलिटिकल मामिलों में शरीक न हों इस के तो कोई माने ही नहीं मालूम होते। केवल संस्कृत या केवल फारसी पढ़े हुओं के समान अङ्गरेज़ी की शिक्षा का तब फल क्या हुया। न यह कभी संभव है कि तालीम की झलक पाये हुये को हमारा देश हमारी कौम हम किस तरह स्वच्छन्दता प्राप्त करैं इत्यादि खयाल न पैदा हों। गवर्नमेंट तो यह चाहती ही है कि स्कूल के लड़को में कौमीयत का जोश ज़रा न आने पावे और इसी हिकमत अमली से स्कूल का कोर्स भी वैसाही कर रही है कि लड़कों की तबियत में उभाड़ न हो। एनी बिसेंट महोदया ने भी यदि गवर्नमेंट की उसी पालिसी को पसन्द किया तो लाभ क्या? हम उनके विरोधी नहीं हैं वे अपनी समझ के अनुसार जो कर रही हैं उस से अवश्य भारत का

कल्याण है पर यह काम उन से नहीं बन पड़ा सो माननाही पड़ता है। कतिपय बङ्गदेशियों को छोड़ युक्त प्रदेश जिनकी जन्म भूमिसी हो गई है बाकी बङ्गाली मात्र श्रीमती से सहमत नहीं हैं। अब वह इसे कितनाही छिपावें ताड़बाज़ों ने उनका हार्दिक्य क्या है सो टटोल लिया ॥

--०--

नैपाल का संक्षिप्त इतिहास।

आषाढ़ के प्रवासी में "नैपाल में काट मांडू" शीर्षक लेख में नैपाल राज्य का छोटा सा वर्णन वहां की बहुत सी बातों की वाकफीयत हमें देता है। यह विस्तीर्ण पर्वत स्थली की लम्बाई ५२० कोस की है और चौड़ाई ९० कोस से १५० कोस तक है। इस के उत्तर की सीमा तिब्बत पूर्व की सिकिम पश्चिम को रोहेल खण्ड और कुमायूं और दक्षिण की ओर हिन्दुस्तान है। किसी समय नैनीताल और मनसूरी प्रभृति पर्वत प्रदेश सन् १८१६ ईस्वी के पूर्व इसी में शामिल थे। अब इन दिनों सब भांत परम स्वच्छन्द राज्य हिन्दुस्तान में केवल नैपाल बच रहा है। २१ सौ वर्ष पूर्व यह हिन्दू राजा के अधिकार में न था बरन तब वहां का राजा एक बौद्ध था। १७६९ ईस्वी में गोरखा वंशीय पृथ्वी नारायण नाम का एक हिन्दू राजा उन बौद्ध राजाओं को युद्ध में जीत आप समस्त नैपाल का राजा हो गया। नैपाल के वर्त्तमान नरेश राजाधिराज पृथ्वीवीरविक्रम इन्ही के वंशधर हैं। एक समय महाराष्ट्र राज्य के सदृश वहां भी मंत्री प्रधान राज्य था। काट माण्डू वहां की राजधानी समुद्र की सतह से ४५०० फुट ऊंची है। यह एक विस्तीर्ण उपत्यका में बसा हुआ है जो लम्बाई में पूरब से पश्चिम को प्रायः २० मील के है। और चौड़ाई उत्तर से दक्षिण को प्रायः १५ मील है। काटमाण्डू को आते समय चन्द्र गिरि के शिखर देश से यह विस्तीर्ण उपत्यका चित्रपट के समान दिखाई देती है। यह चारो ओर पर्वत श्रेणी से मानो रुंधा सा है। ऐसी किम्बदन्ती है कि पूर्व समय नागवास नाम की एक विस्तीर्ण पहाड़ी झील यहां थी चीन देश से आये हुये बोधिसत्व एक महात्मा यहां आय तलवारों

की चोट से पर्वत भेद कर इस झील की समस्त वारिराशि के निर्गमन की रास्ता कर इसे पर्पट मैदान कर डाला। तब से यह मनुष्यों के रहने योग्य हो गया। यह किम्बदन्ती सर्वथा अमूलक नहीं मालूम होती क्योंकि यह उपत्यका बिल्कुल समतल है और कंकर रहित नदीतल सदृश ठौर २ इस में कीचड़ पाये जाते हैं। वाघमती नदी के जल का निर्गम किसी तरह रोक दिया जाय तो यह उपत्यका फिर झील हो जा सक्ती है। राजा गुण रामदेव ने ९२३ ईस्वी में कान्तीपुर को बसाया एक समय यह राजा महा लक्ष्मी की पूजा कर रहे थे कि देवी ने उन्हें स्वप्न में दर्शन दे कहा बाघमती और विष्णुमती नदी के संगम में आप एक नगर बसावैं। इस नये नगर की आकृति खड्ग के समान होगी और प्रतिदिन यहां १ लक्ष का कार वार होगा। महा लक्ष्मी की आज्ञा अनुसार कान्तीपुर को बदल राजा गुण राम ने इसे अपनी राजधानी बनाया। नगर के मध्य भाग में पुरातन राज मन्दिर के निकट काटमण्डू नाम का एक काष्ठ निर्मित घर अब तक बना है। १६९६ में यह घर वहां के राजा की ओर से फकीरों के रहने के लिये बनाया गया था और उस में अब तक फकीर रहते हैं। इसी से इस नगर का नाम काटमण्डू है। वाघमती और विष्णुमती ये दोनो नदियां इसे चारो ओर से घेरे हैं। शहर के ठीक मध्यभाग में बौद्ध राजाओं का पुराना महल अब तक विद्यमान है अब इसे हनुमान ढोंका कहते हैं। इस महल के सिंह द्वार के आगे हनूमान जी की एक विशाल मूर्ति है। इस राज महल का फाटक स्वर्ण निर्मित है। इसके चारो ओर बहुत से देव मन्दिर हैं। यह स्थान बड़ा रमणीक है। हनुमान ढोका के समीपही भैरव की एक अतिवीभत्स मूर्ति है। हनुमान ढोका से प्रायः ४०० हाथ की दूरी पर कोट नाम के एक नये ढङ्ग के बने मकान में १८४६ ईस्वी १४ सितम्बर को यहां एक बड़ा खून खराबा हुआ था। उस दिन नैपाल के अधिकांश रईसों के घराने प्रधान पुरुषों के मारे जाने से नायक हीन हो गये। उसी दिन से

नैपाल के सुप्रसिद्ध मंत्री जङ्गबहादुर के गौरव का प्रारंभ हुआ। इस स्थान के देखने से आज भी उस भीषण घटना को याद कर रोंघटे खड़े हो जाते हैं। काटमांडू के चारो ओर दुर्भेद्य आकार की उन्नत पर्वत श्रेणी जिस के दिगन्त प्रसारी हिमानी मण्डित शिखर समूह और उनके प्रान्त भाग में सुनील नभोमण्डल तथा श्यामल पुष्पितवृक्ष और लता मन को हरे लेती हैं। हिमालय के एक २ स्थल में प्रकृति देवी ने प्राकृतिक सौन्दर्य को मानो कुरे सा दिया है। नैपाल राज्य का खयाल कर हमलोगों की गरदन ऊंची होती है और क्षण भर के लिये गुलामी का भाव अन्तर्लीन हो जाता है। हिन्दुओं की पुरानी रीति नीति का यह देश आदर्श हो रहा है। सुनते हैं व्यभिचार और चोरी दो बुराइयां जैसी यहां कम हैं ऐसा कहीं न होंगी। विलाइती वस्तुओं का प्रचार यहां भी अधिकाई से पाया गया है। हमारे संशोधकों को उचित है कि वहां पहुंच महाराज तथा यहां की प्रजा को सुझावें कि इसके प्रचार को रोकैं। लोग यहां के चतुर्थांश के लगभग बौद्ध होंगे, जो हिन्दू हैं वे विशेष कर शाक्त हैं। इस राज्य में पशुपति महादेव का ज्योतिर्लिङ्ग बड़ा पुराना तीर्थ है। खानिक द्रव्य इस राज्य में बहुत हैं और उस से राज को बड़ी आमदनी होती है। उत्तम कस्तूरी का तो यह उत्पत्ति स्थान है। बड़ी इलाइची भोज पत्र दालचीनी आदि बहुत तरह के गरम मसाले भी यहां कसरत से पैदा होते हैं। भाषा यहां की बङ्ग भाषा से कुछ २ मिलती है। संस्कृत का प्रचार यहां अधिक है और राज काज सब पुराने धर्मशास्त्र के अनुसार किया जाता है। अस्पृश्य अन्त्यज जाति वाले बहुधा नगर के बाहर बसाये जाते हैं। अङ्गरेज़ी शिक्षा का प्रचार फैलता जाता है हमें सन्देह है कि नई सभ्यता का विष यहां भी कहां तक न फैलेगा और पुरानी रीति नीति को धक्का पहुंचावेगा। जङ्गबहादुर यहां बड़ा वीर पुरुष पैदा हुआ और राज्य का उत्तम प्रबन्ध कर नैपाल राज्य को बहुत लाभ पहुंचाया॥

सौअजान एक सुजान॥

यह एक प्रवन्ध कल्पना है जिसे हिन्दीप्रदीप की पिछली जिल्दों से संग्रहीत कर हमने अलग छपवाया है - इस में ऐयारी और तिलिस्म इत्यादि कुछ नहीं है जिस से हिन्दी में उपन्यास बदनाम हो रहे हैं। सुयोग्य पढ़ने वाले ऐसे उपन्यासों से घिन करते हैं और ऐसी पुस्तकों को हाथ से नहीं छुआ चाहते इसी से मैंने निरी उपदेशात्मक कल्पना में इसे बांधा है। विशेष इस का रस केवल पढ़ने ही से मिल सक्ता है। मूल्य ॥) अधिक है इस की शिकायत बहुधा लोग करेंगे किन्तु जिन्हे मेरा लेख पढ़ने का रस है उन्हें यह मूल्य कभी न अखरैगा। प्रदीप के समान मुफ़ में पढ़ने वाले दूसरे लोगों से कोई आशा नहीं कि उनसे मुझे सहारा पहुंचे न केवल खबर पढ़ने वालों पर मेरा लक्ष्य है कि उन्हें यह रुचैगा। इस में यदि हम कृतकार्य हुये और इस की छपाई का खर्च निकल आवै तो ऐसे ही बहुत से लेख प्रदीप की पिछली जिल्दों में निकल चुके हैं क्रमशः उन सबों को पृथक् मुद्रित करा देने का यत्न करेंगे॥

--०--

पुस्तकों की जांच।

याकूती तख्ती या यमजसहोदरा॥

श्री किशोरीलाल गोस्वामी ने अपनी उपन्यास मासिक पुस्तक में बङ्गला उपन्यास हमीदा का छायानुवाद कर छापा है। इस के सम्बन्ध में केवल इतनाही कहेंगे कि इस समय इसे पढ़ लोग स्वदेशानुराग और स्वधर्मानुराग क्या वस्तु हैं सो जानै। इस पुस्तक के पढ़ने से मालूम हो जाता है कि एक जङ्गली अफरीदी जाति में कितना अधिक स्वदेशानुराग तथा स्वधर्मानुराग है। यहां सभ्यता का दम्भरने वालों में भी जो दुर्लभ है। गोस्वामी जी से हमारा यही अनुरोध है कि ऐसा ही एक उपन्यास आज कल की पालिटिक्स पर लिख लोगों के नेत्र खोलैं तो बहुत अच्छा हो मूल्य ।=) है॥

गुप्तचर ।

उक्त गोस्वामी जी ने छोटे साइज़ के ३२ पृष्ठ में इसे छापवना आरंभ किया है। यह जासूसी ढङ्ग का एक उपन्यास है पहिलि नम्बर में "ज़िन्दे की लाश" है प्रति कापी का दाम ≈)॥ और साल भर के १२ नम्बरों का दाम मैं पोस्टेज १॥≈) है। किन्तु जो उपन्यास मासिक पुस्तक के ग्राहक होंगे उन से मैं डाक व्यय केवल १) लिया जायगा ॥

—:0:—

मंजरी ।

यह उपन्यास एस. एल. आर्य ऐन्ड को से मिल सक्ता है। इस उपन्यास के किस्से में चाहो जो हो हर एक पेज के फुट नोट में कम्पनी ने टका कमाने की हिकमत बहुत अच्छी निकाली है। अपने कारखाने की सूची और विज्ञापन खास कर दवाइयों का दै भरपूर लाभ उठाने की संभावना कंपनी को है। स्वार्थ कैसे साधना होता है यह पुस्तक इसका उदाहरण है। जो स्वदेश प्रेमी हैं और जिन को स्वदेशी आतशक या उपदंश मंगाना हो वह इस कंपनी से मंगा सक्ते हैं। दवाइयों का विज्ञापन महा भद्दे अश्लील शब्दों में दिया गया है ॥

———

जापानीय स्त्री शिक्षा ।

महेन्दु लाल गर्ग रचित। जो देश आज दिन अपनी असीम उन्नति को पहुंचा हुआ है वहां की सबी बात सीखने लायक है। जापान में स्त्री शिक्षा किस तरह की है स्त्रियां वहां की विद्या में कहां तक उन्नति किये हैं इस पुस्तक के अवलोकन से विदित हो जाता है। स्त्री मात्र इसे आद्योपान्त पढ़ उचित शिक्षा प्राप्त कर अपने को सुधारैं। मिलने का पता पं० महेन्दु लाल गर्ग सुख संचारक कंपनी मथुरा ॥

आल्हा रामायण॥

उत्तर कांड की कथा के आधार पर आल्हा छन्दों में यह पुस्तक लिखी गई है रचयिता इसके हज़ारीबाग ज़िलह में जोरी ग्राम के रहने वाले पं० वीरेश्वर उपाध्याय हैं मूल्य ।=)

मन तरंग रामायण॥

बाबूलाल प्रयागवाल रचित। हमे विशेष हर्ष इस का है कि तीर्थ की पंडे जो निरक्षर होते आये उन में भी विद्या की चर्चा का फैलना देश की भावी भलाई का सूचक है। ग्रन्थ कर्त्ता ने इस पुस्तक को अपना बहुत सा व्यय कर मुफ़ में बांटा इस लिये विशेष धन्यबाद है॥

गणेश गंज आर्य समाज लखनऊ का इतिहास। जब से वहां समाज स्थापित हुई तब से आज तक का पूरा २ इतिहास समाज का इस में है-आर्य समाज कहां तक तरक्की पर है सो इस से स्पष्ट है॥

दो शोक सम्बाद॥

गत दो मनहूस महीनों में हमारी समाज के दो प्रसिद्ध बड़े आदमियों का हम लोगों के बीच से उठ जाना हमारे लिये बड़ा हानिकारक हुआ। काशी से पं० राम मिश्र शास्त्री और प्रयाग से बरावांधिपति राय महाबीर प्रसाद नारायण सिंह बहादुर। ये दोनों रामानुज सम्प्रादाय के खंब थे। बहुधा देशहित के कामों में अग्रणी हो जाते थे। मिश्र जी अपने पांडित्य से और बरावांधिपति धन से सहायता यथा शक्ति करते थे। शास्त्री जी ऐसे स्पष्टवक्ता थे कि वक्तृता के समय जोश में आय जो स्पष्ट होता था उसी को कह डालते थे इसी से काशी के और पंडितों से इनकी खटपट रहती थी। ऐसा ही बरावंधिपति भी वैष्णव सिद्धान्त में अटल थे इस नई सभ्यता के ज़माने में सनातन क्रम के बड़े पोषक थे। वय इन दोनों का ६० के लगभग का था हमें इन दोनो के उठजाने का सोच है ईश्वर परलोक में इन की आत्मा को सुख दे॥

अचरज भरी खूबियां ॥

हिन्दुस्तान तो इन दिनों अचरज भरी न जानिये कितनी खूबियों का नमूना बन रहा है जिस की पूरी लिस्ट देना पाठकों का समय नष्ट करना है इस लिये जो खास २ खूबियां हैं उन्हें गिनाते हैं ॥

पहिली खूबी धर्म सम्बन्ध में । जो जितना ही अधिक माला खटकाने वाला होगा वह उतना ही पल्ले दरजे की मक्कारी और और दंभ में धुरन्धर होगा । ऐसे लोग जब नरकपुर के पाहुना होंगे तो इन का इन्साफ करने में धर्म राज की भी अकिल चक्कर में आ जायगी ॥

पुरानी रिवाजों में बाल्य विबाह एक खूबी है । इस के जारी रहने से देश में क्या २ बुराइयां बरपा हुईं और हिन्दू की कौम कहां तक गिर गई हज़ार समझाओ पुराने खयाल वालों के मन में एक नहीं धंसती॥

पुराने क्रम की अनेक अनेक खूबियों में दान देने की बड़ी खूबी है जितना दान हिन्दू धर्म में दिया जाता है उतना किसी धर्म में नहीं। पर वह सब का सब व्यर्थ जाता है उस्से कोई ऐसा लाभ नहीं होता कि देश का कोई चिरस्थायी उपकार हो । जिन्हें बड़े २ दान दिये जाते हैं वे उस दान को बहुधा ऐसे कुकार्य में लगाते हैं जो मानो दान देने वालों को घोर नरक में गेरने की सूचना या इश्तिहार है ।

यहां की प्रजा में राजभक्ति आदि अनेक प्रकार की बड़ी २ खूबियों में एक सहन शीलता भी है । गवर्नमेंट जो इन के साथ प्रतिद्वन्दी का सा वर्ताव कर रही है इस का कुछ खयाल न कर अनेक कष्ट और दुःख सहते हुये एक जून आधेपेट खाकर रह जाते हैं पर सब बरदाश्त करते जाते हैं जोश और सर गरमी किसे कहते हैं सो जानते ही नहीं । दूसरी बड़ी खूबी अनैक्य और स्वार्थ है । जितने लोग सब अलग २ हर तरह पर डेढ़ चावल की खिचरी पका रहे हैं एक दूसरे के साथ सहमत कभी हों ही गे नहीं केवल अपना मतलब गंठै इसके

पीछे सब कुछ बिगड़ देश छार में मिल गया कोई परवाह नहीं अपना स्वार्थ न बिगड़ने पावे इसकी ओर से नहीं चूकते ॥

नये २ मत और संप्रदायों में सन्तमत भी बड़ी ही खूबी का है जहां विषम भाव का ओर छोर है। जन समूह के साथ प्रेम और हमदरदी का क्या उसूल है राधा स्वामी ने अपने चेलों को बताया ही नहीं। हकीर से हकीर राधा स्वामी के मत का हो और कष्ठ में पड़ा हो उसको उस कष्ट से उद्धार करने को ये लोग जान तक दे डालेंगे पर और कोई चाहो कैसा ही लोकोपकारी मनुष्य वह हो और सर्व साधारण का उस से बड़ा भला होता हो उसे कष्ठित देख कान पूछ न हिलाय उसकी उपेक्षा कर देंगे। प्लेग के उपद्रव में कई बार ऐसा देखा गया है। दूसरे यह कि हम को इस समय ऐसेही एक धर्म की पैरवी करना उचित है जिस के चलने से गिरी दशा में पड़े भारत का उद्धार हो और लोगों में मुल्की जोश पैदा हो पर देखते हैं तो झुण्ड के झुण्ड लोग इस मत में टूटे पड़ते हैं जिन की एक रेजिमेंट तैयार हो सकती है। अफसोस भारत के ऐसे गिरे दिन में इस लोक के बनने की उपेक्षा कर परलोक बनाने की लोगों को सूझी है ॥

जितनी खूबियां सबों की किबलेगाह हिन्द में इस समय फेशन परस्ती की धूम और यहां की हर एक बातों में धींग धीगा है। जहां और जिस में विलाइत और अङ्गरेज़ीयत की गन्ध भी आ गई वह सब भांत कदर के लायक जहां उसका अभाव है वह विहिश्त और वैकुण्ठ से भी चाहो अपना लगाव रखता हो किसी को पसन्द न होगा। स्वदेशी वस्तु के प्रचारक कितनाही सिर पीटते हैं कि हमलोगों में देश की बनी चीज़ों का प्रचार हो पर फेशन परस्तों के मन में उनका कहना किसी भांत नहीं धंसता। ऐसा ही हमारी सामाजिक तथा

राजकीय बातों का अस्तव्यस्त होना हमलोगों के दिल की कमज़ोरी का इश्तिहार है। हमारे में दृढ़ता होती तो अङ्ग-रेज़ कर्मचारी गण बहुधा जैसा चाहते वैसा धींग धींगा कभी न करने पाते। पूर्वी बङ्गाल के नये लाट फुलर बहादुर में अब वैसा धींग धींगा मचाने की हिम्मत बाकी न रही सो इसी लिये कि वहां के लोंगों में उतनी दिल की कमज़ोरी नहीं है॥

अन्त में पायोनियर के समक्ष की एक खूबी अपने पाठकों को सुनाय इस लेख को समाप्त करते हैं। फुलर साहब के नये सरक्युलर पर पायोनियर लिखता है In actual administrative capacity the Muhame'an is generallay speaking a better man than his Hindu rival "वास्तविक शासन योग्यता मुसल्मानो में अपने हिन्दू प्रतिद्वन्दियों से बहुत अधिक है इस लिये मुसल्मानों को सर्कारी नौकरी पहले मिलनी चाहिये"–ठीक है मुसल्मान जैसा खुशामद करना जानते हैं हिन्दूओं में उस का माद्दा कहां। मुसल्मानों में हुकूमत करने का जोश भी थोड़ा बहुत बना है हिन्दुओं में बिल्कुल बुझ गया है। मुसल्मान उत्कोचप्रिय भी बहुधा हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक हैं। ज़ाहिरदार और धोखा देने का माद्दा भी हिन्दुओं में उतना नहीं है॥

—:o:—

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ } प्रयाग { अगस्त
सं० ८ }   { सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज ३)

—:००:—

जि० २८ } प्रयाग { अगस्ट
सं० ८ } { सन् १९०६ ई०

हुकूमत और बनियई।

इस नई सभ्यता के ज़माने में जहां सबी बातें बदल कर और की और हो गईं और होती जाती हैं वहां शासन के क्रम में भी सभ्यता ने अपना फैलाव फैला रक्खा है। पहिले एक राजा समस्त देश का शासन करता था; हुकूमत की बागडोर अपने हाथ में रख शुद्ध क्षात्र धर्म पर आरूढ़ रह प्रजा का पालन पोषन करता हुआ उन से कर उगाह उन के सुख और आराम की भरपूर फिकिर के बाद जो बचता था उसे अपने ख़ज़ाने में रखता था। वह क्रम बिल्कुल गया अब एक जाति दूसरी जाति का शासन करती है और वह शासन बनियई के उसूल Commercial principle पर है। किन्तु इस क्रम के शासन

से जो जाति शासित होती है वह सब भांत नुकसान में रहती है। ईश्वरेच्छा कुछ ऐसी ही हुई कि भारत का शासन इस समय ऐसे लोगों के हाथ में आ गया है जो "आम के आम गुठलियों के दाम" इस कहावत पर अमल करने वाले हैं। ३१ करोड़ आदमियों के जान और माल की रक्षा या विनाश; उन की मौत या ज़िन्दगी की कुंजी जिन के हाथ में है। जिन का प्रसादोन्मुख एक वार का दृष्टि पात निष्किंचन महाकङ्गाल को सम्राट् कर देता है और क्रोधाध्मात जिन के कुटिल कराल भ्रू विक्षेप से बड़ा सम्राट् भी निष्किंचन हो जाता है। वणिक् वृत्ति जिन में स्वाभाविक है बल्कि यों कहें कि जिसे वे माके पेट से ले जन्मते हैं इसी से बनियों का सा संकुचित भाव बचपने ही से उन में भर जाता है। हमारे तो ये सर्वेश्वर हैं, जेता हैं; प्रभुवर हैं; पथ प्रदर्शक गुरू या उस्ताद हैं; सब्ज़बाग दिखलाने वाले हैं; क्या ताकत कि ज़बान पर उन की शान में कोई बात ला सकें किन्तु उन्हीं के समकक्ष और बराबरी का दावा रखने वाला नेपोलियन बोनापार्ट अपनी बीरता और क्षत्रियत्व के घमण्ड में आय इन्हें A nation of shop keepers दुकान रखने वालों की एक जाति कह गया है। मुसल्मान शासन कर्ता मुगल पठान जो ८ सौ वर्ष तक हमें अपने अधीन किये थे; इस में सन्देह नहीं उन्हों ने मन मानता नोच खसोट किया पर थे शुद्ध क्षत्री। पहले तो अपने बीरत्व के ज़ोम में कई बार काट मार कर कराय लूट पाट जो कुछ हाथ लगा लै लिवाय चल खड़े हुये किन्तु जब यहां बस गये यहां के असली बासिन्दों के साथ इन की खिल्त मिल्त हो गई और इसी भूमि को घर मान लिया तब यहां वालों के साथ उन का सब बर्ताव घरैलू हो गया। वे ऐयाश थे; विषयी तथा भोग लिप्सू थे, लंपट थे; कोई२ उन में ज़ालिम तअस्सुबी और कट्टर भी थे पर शुद्ध क्षत्रियों का गुण उन में अवश्य था। बनिये न थे कि तुच्छ सी तुच्छ बातों में अपनी बनियई आदत के ज़ाहिर

करने में न चूकैं। यह जुदी बात है कि यह समय दौड़धूप का है हर एक बात की बास्तविक उपयोगिता practical utility देखी जाती है नहीं तो कूड़ा करकट और जानवरों की हड्डी चमड़े तक बेंच शासनकर्ता पैसा वसूल कर लेते हैं। अपने कौल के अनुसार शासन के अधिकारी तालीम की बरकत से हमारे नेत्र खोल दिये; सभ्यता सिखलाय जानवरों से हमें आदमी बना दिया; शेर और बकरी दोनों एक घाट पानी पिलाते हमारा इन्साफ़ करते हैं किन्तु अपनी स्वाभाविक वणिक् वृत्ति से नहीं चूकते। दावा तो इनका ऐसा भारी और बड़े बोल का है कि हम हिन्दुस्तान को सुधारने आये हैं; हिन्दुस्तान के लोगों को अपने स्वरूप का ज्ञान तथा अपने स्वत्व की पहिचान सिखाते हैं; जिस में ये अपना शासन अपने आप करने लग जांय। यहां का रुपया यहीं के फ़ाइदे में लगाते हैं। इस तरह के बड़ बोल से यही मालूम हुआ कि ये तो बड़े परोपकारी कोई ऋषिमुनि हैं, हमारे आर्य ऋषियों के दादागुरू हैं श्वेतद्वीप से यहां हमें कृतार्थ करने और संकट से उबारने आये हैं। कौन जानता था कि अन्त में यह सब बणिक् व्यापार निकलेगा और स्वार्थ से खाली कोई बात न होगी। शासन के अनेक जुदे २ बड़े २ महकमों में एक भी ऐसा न निकलेगा जिस में उस महकमे का ख़र्च बर्च दे देवाय अन्त में फाइदा न रहै। उस फाइदे के अलावे कि बड़े २ ओहदे जिन की तनखाह ५०० से अधिक हैं सब उन्ही में बटे हैं; हम इस योग्य होने पर भी कि उस पर नियत किये जांय बहुधा मुहताकते रह जाते हैं। पोस्ट आफ़िस आदि कई एक महकमें तो बड़े ही फाइदे के हैं। अदालतों को लीजिये इन्साफ ज़रूर होता है किन्तु स्टैम्प का खर्चा इतना अधिक बढ़ा दिया गया है और Litigation क़ानून की पेचीदगी इतनी होती जाती है कि इन्साफ चाहने वाले का चूर ढीला हो जाता है; मुकद्दमा लड़ने वाले दोनों फ़रीक दरिद्र हो जाते हैं; जो जीतता है वह भी हारे हुये के समान अन्त में ठहरता है। अच्छा किसी ने कहा है। "जो नहि मानो हमरी सीख। जावअदा-

लत मांगी भीख" इस को इन्साफ कहेंगे? यह तो खासा रोज़गार है। एक स्टैंप की बिक्री के फ़ाइदे से खर्चा सब निकल अन्त में फाइदा रहता होगा। एक दिन ऐसा आवेगा कि चेतते चेतते जब लोग चेतैंगे तो अदालतों से भी वैसाही घिनाने लगैंगे जैसा इस समय विलाइती चीज़ों से घिनाते हैं। एक शिक्षा विभाग अलबत्ता ऐसा है जिस में सर्कार को कोई फाइदा नहीं है और जो शुद्ध हिन्दुस्तान के फाइदे और तरक्की के लिये है। सो वही सब भांत खटक रहा है और रोज़ एक न एक हिन्दी की चिन्दी इस में ऐसी निकला करती हैं कि जिस में शिक्षा के भार से गला छूटै। सच पूछो तो शिक्षा विभाग में भी पास का नहीं लगता ज़मीदारों से स्कूल का ख़र्च उगाह लिया जाता है। फीस इतनी अधिक कर दी गई और होती जाती है कि पास का न जाता होगा। इस में मुनाफा नहीं है इस से इस की ओर अरुचि है।

भारत विदेशी शासन में है तब स्वदेशी शासन की सी भलाई की आशा ही करना भूल है। विदेशी शासन में भी राजाही सब कुछ हो सो नहीं बरन एक जाति दूसरी जाति का शासन कर रही है और वह भी बनियई को लिये हुये तब शासक और शासित में परस्पर की स्पर्द्धा और प्रतिद्वन्दिता अनिवार्य है। शासक जाति के साथ शासित जाति की प्रतिस्पर्द्धा भी कहना भूल है इस लिये कि वहां क्षात्रधर्म और वैश्य कर्म हुकूमत और बनियाई भर पूर है यहां दोनों में एक भी नहीं केवल सेवकाई। न जानिये कब से जिन की नस २ में गुलामी और दास्य भाव पैठा हुआ है तब जो निरा सेवक है वह किस मुह से ज़र्रारी तर्रारी के रोब को अपने में ला सक्ता है और हुकूमत कर सक्ता है। अथवा व्यापार कुशल बड़ा सेठवन बनिज व्यौपार की काट छांट जमझ सक्ता है। उस समय का ओर छोर नहीं

यह शासित जाति जब से सेवा वृत्ति करते २ कर्म से सर्वथा शूद्र हो गई किन्तु इन के परिस्कृत मस्तिष्क की शक्ति का ह्रास न हुआ कर्मणा शूद्र होकर भी दिमागी ताकत में किसी सभ्य जाति से हेठे न रह दुष्प्रप्य वस्तु के लिये भी हाथ लपकाते हैं "प्रांशुलभ्ये फले मोहादुद्वाहुरिव वामनः"

अस्तु इस में सन्देह नहीं हमारे वर्त्तमान शासनर्ता और उन की शासन प्रणाली सराहने योग्य है यदि बनियाई का यह निकृष्ट भाव उस में से अलग कर लिया जाता तो जैसा उदार शासन वृटिश जाति का और गवर्नमेंट इङ्गलीशिया का है शायद वैसा इस भू मण्डल पर दूसरा न निकलता। किन्तु योरोप के कई सभ्य देशों का यह क्रम कि राजा को वैसा पूरा अधिकार राजकाज का नहीं रहता जैसा Absolute monarch सर्वतो मुखी प्रभुता रखने वाले नृप को होना चाहिये। एक रशिया को छोड़ बाकी छोटी या बड़ी रियासतें वहां बहुधा इसी क्रम की हैं जिस में प्रजा को राजकाज में अनेक तरह का स्वत्व प्राप्त है। इस दशा में शासित जाति पर उस देश की प्रजा को शासन का बहुत सा अधिकार हुआ ही चाहे उसी में अपने देश के बनिज व्यापार की तरक्की भी है और उन के लिये जो तरक्की है वह हमारे लिये तवज्जुली का बाइस है। हम नहीं चाहते कि विलाइत का पैसा हमारे लिये खर्च किया जाय वरन हमारे देश का धन हमारे ही फाइदे में उठाया जाय। बड़े २ अधिकार विलाइत के लोगों को न दै हमी को दिये जांय तब अलबत्ता कहा जायगा कि बनियाई नहीं है। इङ्गलैंड का छोटा सा टापू जहां की पृथ्वी भी शीत प्रधान देश होने से बिल्कुल उपजाऊ नहीं है वरन अधिक

तर पर्वत स्थली है सो इस समय सोने के फूलों से फूल रहा है। समग्र भारत की सम्पत्ति सिमिट २ वहां इकट्ठी होती जाती है प्रफुल्ल अरविन्दानना महा लक्ष्मी ईषत् हास्य युक्त कटाक्ष पात से एक अनोखा प्रलोभन दिलाती हुई इस जङ्गम जगत् में कौन ऐसा होगा जिस का मन उस ओर न खिच जाय। यह सब उसी का फल है कि भारत का शासन इस के अधिकार में है। पर इस बात को भूल जाना मन में कभी इसका खयाल न होना यह उसी बनियई आदत वणिक् व्यापार और २ संकुचित भाव का परिणाम है। नहीं तो शुद्ध क्षात्र धर्म केवल हुकूमत में इंगलैण्ड की इतनी श्री वृद्धि असम्भव थी। अस्तु इस वणिक् व्यापार में थोड़ा उदार भाव रहता तो हमारी इतनी हानि न होती लाचारी है॥

--०--

वायु।

जगदीश जगदाधार ५ तत्वों में वायु जो सबों में प्रधान है हमारे शरीर में सन्निवेशित कर हमे प्राणवान् किये हैं। वायु पांचोतत्वों में प्रधान है इस के प्रमाण में तैत्तरीय उपनिषद् की यह श्रुति है।

"तस्मादेतस्मादात्मनः आकाशः सम्भूत आकशा-
द्वायुर्वायोरग्निरग्नेराप अद्भ्यः पृथिवी।"

"उस परमात्मा की सत्ता से पहले आकाश हुआ आकाश से वायु वायु से अग्नि अग्नि से जल जल से पृथिवी हुई। अग्नि वायु जल इन तीनों में वायु सबों में प्रधान है। शरीर के एक २ अवयव हाथ पांव नाक कान आंख इत्यादि में किसी एक के न रहने से भी हम जी सक्ते हैं। पर शरीर में वायु न रहे तो न जियेंगे। हमारे हाथ पांव रस और मांस तथा मेदा के बने हैं। विशेष कर जल और पृथिवी इन्ही दो तत्वों से इन का निर्माण है न भी हों तो मनुष्य लूला और लङ्गड़ा हो जी

सक्ता है। ऐसा ही हमारे दोनो नेत्र तैजस सदार्थ हैं नभी हों तो हम अन्धे हो जीते रहैंगे किन्तु एक मिमिट भी मुह और नाक बन्द कर वायु का गमनागमन बन्द कर दिया जाय तो तत्क्षण हम मूर्छित हो जांयगे। प्राणी मात्र के लिये वायु तो जीवन हई है वरन उद्भिज्ज पेड़ पालव भी हवा न लगने से हरे भरे नहीं रह सक्के। वायु क्या पदार्थ है उसे हम नेत्र से नहीं देख सक्के किन्तु विचित्र शक्ति अद्भुत कल्पना शाली सर्वेश्वर उस के ज्ञान के लिये त्वगन्द्री हमे दी है और किसी दूसरी इन्द्री से वायु को हम प्रत्यक्ष नहीं कर सक्के। नैयायिकों के मत के अनुसार शब्द और स्पर्श यह दो इस के विषय हैं। दार्शनिकों ने शब्द गुण आकाश माना है। मछली आदि जल चर जन्तु जिस तरह अनन्त अगाध समुद्र में रहते हैं वैसाही हम विपुल वसुन्धरा के ऊपर इसी विशाल वायु सागर में रहते हैं। मृदुमन्द गामी समीरन वृक्षों के पत्तों को कंपाते थके मान्दे मनुष्य को शीतल और पुलकित गात्र करता हुआ चलता है तब हम उस की गति का अनुमान करते हैं किन्तु प्रत्यक्ष नहीं कर सक्के कि वायु क्या पदार्थ है। जब यह घोर गम्भीर गर्जन से दिङ्मण्डल को पूरित करते अपने प्रबल आघात से ऊंचे २ पेड़ों को उखाड़ डालता है उस समय हम वायु के केवल अस्तित्व मात्र से नहीं वरन इस की असाधारण शक्ति से परिचित होते हैं। संस्कृत दर्शनकार शब्द गुण आकाश मान गये हैं किन्तु यूरोप के विज्ञान वेत्ताओं ने परीक्षा द्वारा प्रमाणित कर दिया है कि शब्द आकाश का गुण नहीं है किन्तु शब्द भी वायु का गुण है। एक बोतल जिस की हवा वायु निष्काशन यन्त्र द्वारा निकाल ली गई हो उस में कंकड़ भर हिलाओ तो शब्द न होगा। इस से यह बात स्पष्ट है कि बोतल

के भीतर आकाश के होते भी जो शब्द नहीं होता तो शब्द वायु का गुण है ॥

केवल इतनाही नहीं कि वायु जगत् का प्राण प्रद है अमर से "जगत्प्राण समीरणः" ऐसा वायु का नाम लिखा है अपिच इस में और अनेक गुण हैं। यह आर्द्र को सूखा कर देता है उत्तम गन्धि बहन कर प्राण इन्द्री को तृप्त करता है "सुरभिर्घ्राणतर्पणः" यह सुगन्धि का नाम वायु ही के कारण पड़ा है। इस भूपृष्ठ पर ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां वायु न हो अतल स्पर्श सागर अन्धकार पूरित शून्य गुफा अत्युच्च पर्वत शृङ्ग सब ठौर इस का अस्तित्व है। भूपृष्ठ से ४० मील ऊपर तक वायु का संचार अच्छी तरह अनुभव किया गया है। ज्यों २ ऊंचे स्थान में जाइये त्यों २ वायु पतला होता जायगा यहां तक कि बहुत ऊंचे स्थान में जैसा हिमालय के अत्युच्च शिखर पर इतनी कम हवा है कि हम वहां श्वास नहीं ले सक्ते। सूर्य सिद्धान्त में लिखा है समस्त राशि चक्र प्रवह वायु द्वारा आकृष्ठ हो अपनी २ कक्षा में निरन्तर भ्रमण करता है। उसी राशि चक्र में बंधे हुये सूर्यादिग्रह अपनी २ नियमित कक्षा पर नियमित चाल से चला करते हैं। "भूचक्रं ध्रुवयोर्बद्धमाक्षिप्तं प्रवहानिलैः पर्यात्यजस्रं तन्नद्धाग्रहकक्षा यथा क्रमः" सिद्धान्त शिरोमणि में लिखा है पृथिवी के बाहर १२ योजन तक जो वायु है उसी में मेघ और बिद्युत् रहते हैं ऊपरान्त प्रवह नाम का वायु है और उसकी गति सदा पश्चिमाभिमुख रहती है उसी में ग्रह और नक्षत्र सब हैं। वामन पुराण में सात प्रकार का वायु लिखा है वही मरूत् के गण हैं। जिन के नाम ये हैं प्रवह, निवह, उद्वह, संवह, बिवह, प्रवह, परिवह। इन्द्र ने इन सातों वायु का आकाश में पथ विभाग निश्चित कर दिया है। पुराण में वेही मरूत् के गण कहे गये हैं। ये मरूद्गण क्या हैं सो फिर कभी लिखेंगे ॥

—:०:—

सन्त-समागम ।

ठाकुर सूर्य कुमार वर्मा रचित

कबीर दास ॥

सोना सज्जन साधु जन, टूटि जुरैं सौ वार।
दुर्जन कुम्भ कुम्हार के एकै धका दरार ॥

संसार में सब चीज़ें सुलभ हैं, परन्तु सज्जन, साधु महात्मा लोगों का दर्शन बहुत ही दुर्लभ है कारण इस का यह है कि बहुधा लोग पाखंडियों के जाल में फस कर असली सज्जन साधुओं पर भी विश्वास नहीं करते। जब मनुष्य किसी से ठगा जाता है, तब उस का उस पर विश्वास कम हो जाता है। इसी लिये वर्तमान समय में साधुओं की निन्दा सुनने में आती है। यदि सौ साधुओं में कोई एक सज्जन निकल आया तो उस पर भी लोग विश्वास नहीं लाते। इसी से कहना पड़ता है कि साधुओं का दर्शन आज कल बहुत दुर्लभ है। खाली गेरुआ वस्त्र पहरने से मनुष्य में साधुता नहीं आती। साधुता का लक्षण एक पण्डित ने इस प्रकार किया है:--

उपकारिषुयस्साधुः साधुत्वे तस्य को गुणः
अपकारिषुयस्साधुः ससाधुः सद्भिरुच्यते।

मतलब यह है कि जो अपकार के बदले में उपकार करे वही सच्चा साधू है। तब इस में कोई सन्देह नहीं है कि अपकार के बदले में उपकार करने की सद्बुद्धि बिना ईश्वरीय कृपा के प्राप्त नहीं हो सकती, इस कार्य के लिये ईश्वर कृपा की अधिक ज़रूरत है। खाली निज पराक्रम से मनुष्य इस कार्य को साधन नहीं कर सकता। क्योंकि जो काम राजा की बड़ी सैना; लाखों मनुष्य मिल कर नहीं कर सकते

वह काम साधु की वाणी द्वारा सहज में पूरा होता है। इसी से कहते हैं कि राजा लोग अपना प्रभुत्व, अधिकार मनुष्य के केवल शरीर पर कर सकता है; परन्तु महात्मा लोग मनुष्य के मन पर अपना अधिकार जमा लेते हैं। और यही कारण है कि राजा की अपेक्षा साधु का मान संसार में अधिक है। जब कभी किसी साधु ने चाहा तब उसने अपने विचारों से राजाओं के राज्य को उलट पलट दिया। संसार की काया पलट कर दी। भारतवर्ष में तो इस की सैकड़ों मिसालें मौजूद हैं; परन्तु यूरप भी इन मिसालों से खाली नहीं है। लूथर की जीवनी इस का प्रत्यक्ष प्रमाण है। अतएव आज हम लाखों मनुष्यों के हृदय पर अधिकार करने वाले महात्मा कबीर का जीवन चरित संक्षेप से नीचे देते हैं॥

कबीर जी के माता पिता का ठीक ठीक पता नहीं चलता। किसी किसी का कथन है कि काशी में नूरअली नाम का एक जुलाहा रहता था; उस की स्त्री का नाम नीमा था। उसी के पेट से कबीर का जन्म हुआ। और कोई लोग यह कहते हैं कि नूरअली गङ्गा के किनारे सूत धो रहा था; वहां पर उसे एक बालक बहता हुआ आता दिखाई दिया; उसने उसे गङ्गा से निकला; और जीता हुआ बालक देख उसे अपने घर लाया। उस की स्त्री के निज सन्तान न होने के कारण उसने बालक को पाल पोष बड़ा किया। इसी प्रकार और भी कई एक आख्यायिकायें हैं। कबीर का जन्म सन् ११४८ के लगभग हुआ ऐसा अनुमान किया जाता है। उसी समय भारत में हिन्दुओं की स्वतंत्रता का सूर्य पश्चिम में अस्त हो रहा था भारतवर्ष के अग्नि वंशीय अन्तिम राजा की स्वतंत्रता की अग्नि उस समय पर बुझ रही थी और मुसल्मानों के भाग्य का उदय हो रहा था॥

उस समय भारत में बहुत ही कम मुसल्मान रहते थे। ख़ास कर काशी शहर में उस समय ज्यादातर हिन्दुओं की बस्ती थी।

अतएव बालक कबीर, हिन्दू बालकों के साथ ही खेला कूदा करते थे। इसी कारण हिन्दुओं की रीति रिवाज और उन के देवताओं के नाम से कबीर को बहुत कुछ परिचय हो गया था। राम कृष्ण शिव का नाम वे सहज ही में जान गये थे। उनका मन लड़कपन से ही भक्ति पक्ष की ओर था उन्हें किसी मत मतान्तर की अधिक परवाह न थी। परन्तु यह बात उन के पालन कर्ता नूरअली व मुसलमानों को नहीं भाती थी। अतएव वे लोग उनसे घृणा करने लगे। परन्तु जब घृणा करने से भी उनका मन भक्ति की ओर से वे लोग न फेर सके तब उन लोगों ने कबीर को दुःख देना आरम्भ किया। वे लोग नाना प्रकार के उन्हें कष्ट पहुंचाने लगे। अन्त में यहां तक नौबत पहुंची कि स्वयम् नूरअली उसका बध करने को तय्यार हुआ जब कबीर ने यह दशा देखी, तब वे विरक्त होकर, घर से निकल गये और कौन धर्म या मत सच्चा है इस की वे खोज करने लगे। उन्हों ने मुसलमान क़ाज़ी, मौलवियों और हिन्दू पण्डित पुजारियों से इस मामले में खूब बहस की। परन्तु उनका किसी से समाधान न हुआ। चित्त की अशान्ति से वे व्याकुल रहने लगे। अन्त में वे स्वामी रामानन्द के पास गये। इनका उनका खूब बादा बिबाद हुआ। रामानन्द स्वामी रामानुज के अनुयायी थे। ये बहुत बड़े विद्वान दार्शनिक पण्डित थे। इनकी बातों से कबीर जी को कुछ समाधान हुआ। रामानन्द का उपदेश इन्हे ग्राह्य हुआ। अतगव कबीर ने इन्हे अपना गुरू बनाया। परन्तु तौ भी ये किसी एक धर्म के अनुयायी न हुए। हिंदू मुसल्मान दोनों की वे निन्दा करते थे। कबीर जी ने जो उनके मत में बात सच जंची उसे साफ़ साफ़ कह दिया। उन्हो ने हिन्दू मुसल्मान दोनो में दोष देख यह कहाः—

"सन्तो देखत जग बौराना।
सांच कहों तो मारन धावें झूठे जग पतियाना।
नेमी देखे, धर्मी देखे प्रात करहिं असनाना।
आतम मारि पाषाणहि पूजैं, उन में कछू न ज्ञाना।
बहुतक देखें पीर औलिया, पढ़ैं किताब कुराना।
कर मुरीद तदबीर बतावें, उन में उन्हे जो ज्ञाना।
आसन मारि डिंभ धरि बैठे, मन में बहुत गुमाना।
पीतर पाथर पूजन लागे, तीरथ गर्व भुलाना।
माला पहिरे टोपी दीन्हे, छाप तिलक अनुमाना।
साखी शब्दे गावत भूले, आतम ख़बर न जाना।
हिन्दू कहैं मोंहि राम पियारा, तुरक कहैं रहिमाना।
आपुस में दोउ लरि लरि मूये। मर्म न काहू जाना।
घर घर मंत्र जे देत फिरत हैं, महिमा के अभिमाना।
गुरुवा सहित शिष्य सब बूड़े, अन्त काल पछिताना।
कहैं कबीर सुनो भाई सन्तो ई सब भर्म भुलाना।
केतिक कहों कहा नहि माने, आपहि आप समाना।

इस पद में कबीर जी ने यहां तक कह दिया है कि जो लोग साखी शब्द गाते फिरते हैं और आत्मा को नहीं पहचानते उस से भी कुछ लाभ नहीं। इस से यह भी अनुमान होता है उन्हीं के ज़माने में लोग उनकी बताई साखी और शब्दों की क़दर करने लगे थे। बिना आत्मा को चीनहे ही लोग साखी और शब्दों द्वारा लाभ उठाना चाहते थे। उनके इस काम की बाबत उन्हे निषेध किया है॥

कबीर हिन्दू मुसल्मान दोनों के मत की निन्दा करते हैं जब यह ख़बर बादशाह को पहुंची तब बादशाह ने उनको बुला कर इस बाबत पूछा कि क्या कारण है जो आप दोनो धर्म वालों की निन्दा करते हैं! आप का क्या धर्म है ? इस पर कबीर ने कहाः—

"भाई रे! दुइ जगदीश कहां ते आए कहु कौने भरमाया।
अल्ला राम करीम केशव हरि हजरत नाम धराया।
गहना एक कनक ते गहना तामें भाव न दूजा।
कहत सुनतको दुई कर थापे यक निमाज यक पूजा।
वही महादेव वही मुहम्मद ब्रह्मा आदम कहिये।
कोइ हिन्दू कोइ तुरक कहावै एक ज़मी पर रहिये।
वेद किताब पढ़े वे कुतबा वे मौलाना वे पांड़े।
बिगत बिगत के नाम धरायो यक माटी के भांड़े।
कह कबीर वे दोनों भूले रामहि किनहुं न पाया।
वे खसिया वे गाय कटावैं बादै जन्म गंमाया" ॥

यह सुन कर बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ और उन का चेला हो गया। सुनते हैं कि बादशाह के कोई ऐसी बीमारी थी जो बहुत कुछ दवा दारु करने पर भी नहीं जाती थी। परन्तु वह बीमारी केवल, कबीर के आशीर्बाद से जाती रही।

कबीर के बहुत से शिष्य हुए। उन सबों में धर्मदास मुख्य था। इसी ने कबीर पंथी मत स्थापन किया! कबीर साहब एक ईश्वर बादी थे। उन्हों ने जो जो शब्द अपने मुंह से निकाले, उनको, बिलकुल सच्चा सिद्धांतवत् मान कर उनके शिष्य लोग उन पर अमल करते थे। उन शब्द साखी इत्यादि कविता में प्रसाद गुण अधिक है। उन्हों ने रमैनी शब्द, कहरा, वसंत, चौतीसी, विप्र मतीसी, चाचरि, हिंडोला, बेलि और साखी इत्यादि बहुत सी पुस्तकें बनाई हैं; जो सब मिल कर "कबीर दास का बीजक" कहलाती हैं। सुनते हैं कि कबीर ने ३२००० दोहे और १४००००० शब्द बनाये थे परन्तु अब उनके इतने दोहों अथवा शब्दों का पता नहीं लगता।

कबीर साहब ने अपनी पुस्तकों में सब बातें अनुभव सिद्ध लिखी हैं वे अपने विश्वास के पड़े पक्के थे। सच कहने में वे कभी नहीं

डरते थे। परन्तु बादा-विबाद उनको पसन्द न था उन्हों ने एक स्थान पर अपनी पुस्तक रमैनी में लिखा हैः—

"बोलाना कासों बोलिये भाई। बोलत ही सब उत्र नसाई।
बोलत बोलत बाढ़ विकारा। सो बोलिय जो परे विचारा॥
पंडित सों बोलिय हितकारी। मूरख सों रहिए भख मारी।
कह कबीर ई अध घट बोले। पूरा होय विचार लै बोले।

मालूम होता है कि कबीर अवतार-बाद के भी पक्षपाती न थे, अर्थात् वे ईश्वर का अवतार लेकर संसार का उनके द्वारा उद्धार होना नहीं मानते थे; उन्हो ने इस बारे में भी कहा हैः—

सन्तो आवे जाय सो माया।
है प्रतिपाल काल नहि वाके ना कहुं गया न आया।
क्या मक़सूद मच्छ कच्छ होता शङ्खासुर न संहारा।
अहै दयाल द्रोह नहि वाके कहहु कौन को मारा।
वे कर्ता नव राह कहावें धरणि धरें नहि भारा।
ये सब काम साहब के नाहीं झूंठ कहै संसारा।
खम्भ फारि जो बाहर होई। ताहि पतिज सब कोई।
हिरणा कुश नख उदर विदारे; सो नहि कर्ता होई।
बामन होय न बलि को यांचे। जो यांचे सो माया।
बिना बिबेक सकल जगजड़ है, माया जग भरमाया।
परशु राम क्षत्री नहिं मारा, ई छल माया कीन्हा।
सत् गुरु भक्ति भेद नहिं जाने। जीवअमिथ्या दीन्हा।
सिरजन हार न व्याही सीता। जल पषाण नही वंधा।
वे रघुनाथ एक के सुमिरे। जो सुमिरे सो अंधा।
गोपी ग्वाल गोकुल नहि आये। करते कंस न मारा।
है मेहरवान सबन को साहब। नहिजीता नहि हारा।
वे कर्ता नहि बौद्ध कहावैं। नहीं असुर को मारा।
ज्ञान हीन कर्ता सब भरमें। माया जग संहारा।
वे कर्ता नहि भए कलंकी। नहीं कलिंगहि मारा।

ये छल बल सब माया कीन्हा । पतित सतित सबद्वारा।
दश अवतार ईश्वरी माया । कर्ता कै जिन पूजा ।
कहैं कबीर सुनो भई संतो । उपजै खपै सो दूजा ।

उन के इस शब्द से साफ़ मालूम पड़ता है कि उन को हिन्दू के अवतारों पर विलकुल विश्वास न था । उन का मत ऐसा मालूम होता है कि जो वस्तु उत्पन्न हुई वह नाशवान् ज़रूर है और जिस का नाश हो; वह ईश्वर नहीं । ईश्वर विकार रहित है; उस में माया का लेश नहीं । माया का लेश होने से वह ईश्वर नहीं रह सकका; जो जन्म मरण के दुःख को भोगता है; वह ईश्वर नहीं, उस से भिन्न कोई दूसरा ही है ॥

हम ऊपर लिख आए हैं कि कबीर साहब भक्ति पक्ष के अनुयायी थे; अतएव वे रोज़ा निवाज पूजा व्रत की कुछ परवाह नहीं करते थे । दोनों जातियों के धर्म में जो अवगुण उन्हें दीख पड़ते थे उस की वे निन्दा करते थे; एक स्थान पर उन्हों ने लिखा है ।

सन्तो राह दुनो हम दीठा ।

हिन्दू तुरुक हठी नहीं माने स्वाद सबन को मीठा ।
हिन्दू व्रत एकादशि राखें दूध सिंघाड़ा सेती ।
अन को त्यागे मन नहिं हरकें पारन करें सगोती।
तुरुक रोज़ा निमाज गुजारे बिसमिल बांग पुकारें ।
उनकी भिश्त कहां ते हुई है । साझैं मुर्ग़ी मारें ।
हिन्दुन दया मेहर तुरुकन वे दोनों घट सों त्यागी।
वे हलाल वे झटका मारें, आग दोहुन घर लागी ।
हिंदू तुरुक कि एक राह है, सद्गुरु यही बताई ।
कहें कबीर सुनो भई संतो, राम न कहयो खुदाई ।

अहिंसा धर्म की ओर उनको बहुत ही ज्यादा ख़याल था उन्होंने इस बाबत बहुत से पद बनाये हैं और उस में ब्राह्मणों की निंदा भी की है । उन पदों में से एक पद हम नीचे देते हैं:-

सन्तो पांड़े निपुण कसाई !

बकरा मारि भैंसा को धावैं दिल मे दर्द न आई।
करि असनान तिलक करिबैठे, विधि सों देव पुजाई।
आतम राम पलक सों बिनशे, रुधिर की नदी बहाई।
अति पुनीति ऊचे कुल कहिये; सभा मांह अधिकाई।
इतने दिक्षा सब कोई मांगे; हंसि आवे मोहि भाई।
बाप कहन को कथा सुनावें, कर्म करावें नीचा।
बूड़त दोउ परस्पर देखा, गहे हांथ यम घींचा।
गाय बधैं ते तुरुका कहिये, उनते वे का छोटा।
कहहिं कबीर सुनो भई सन्तो। कलिका ब्राह्मन खोटा।

बलि प्रदान में हिंसा के कारण कबीर जी ने ब्राह्मणों को बहुत कुछ कुवाच्य कहें हैं। मालूम होता है उस ज़माने में ब्राह्मण लोग बहुत ज्यादा पशु यज्ञ करते थे; क्योंकि यह सब बातें पशु यज्ञ देख कर ही कबीर साहब ने कही हैं॥

कबीर साहब ने राम की महिमा पर सैंकड़ों हज़ारों पद लिखें हैं उन में से एक हम नमूने के तौर पर नीचे देते हैं।

"राम गुण न्यारो न्यारो न्यारो।
अबुझा लोग कहा लो बूझें बूझन हार बिचारो।
केते रामचन्द्र तपसी सों जिन जग यह बिरमाया।
केते कान्ह भए मुरली धर तिन भी अन्त न पाया।
मत्स्य कच्छ बाराह स्वरूपी बामन नाम धराया।
केते बौद्ध भए निकलंकी तिन भी अन्त न पाया।
जाकी गति ब्रह्मा नहिं पाई। शिव सनकादिक हारे।
ताके गुण नर कैसे पैहो। कहे कबीर पुकारे।

यहां पर हम कबीर की कबिता के बारे में भी कुछ कहना चाहते हैं; उन के बाज़ बाज़ पदों की कविता बड़ी ही उत्तम मनोहारिणी है और बाज़ की बड़ी भद्दी; इस बाबत मेरा अनुमान है कि कबीर नाम के कई एक साधु हुए हैं। जिस प्रकार प्राचीन समय में वशिष्ट नारद व्यास इत्यादि पदवियां थीं उसी तरह कबीर नाम की भी लोगों ने पदवी धारण की; अथवा लोगों ने कबीर अपना उपनाम रक्खा। इसी कारण कविता और भावी में भेद जान पड़ता है।

कबीर साहब ने कबीर पंथी मत चलाने का कभी उद्योग नहीं किया। इस पंथ को उन के शिष्य धर्म दास ने चलाया। कबीर साहब का विचार किसी मत अथवा पंथ चलाने का न था; यह बात उन के पदों से प्रगट होती है परन्तु संसार में लोग कब मानते हैं। इन के मत का संसार में खूब प्रचार हुआ। कबीर पंथी लोग पृथ्वी पर बहुत दूर दूर फैले हुए हैं। खास कर मध्य प्रदेश के छत्तीस गढ़ ज़िले में इनकी तादाद बहुत ज्यादा है। इस के अलावा जमेका मरिशश वृटिशग्वैना डच ग्वैना इत्यादि देशों में भी इन की बहुत आवादी है। सन् १८९१ ईस्वी की मरदुम शुमारी के अनुसार इन की कुल तादाद अड़तालीस लाख थी। कबीर साहब के वंशजों के पास रीवां राज्य की ओर से ४००८० की जागीर लगी हुई है जो अब तक बराबर जारी है।

कबीर साहब के पास एक बार एक दुःखी पुरुष ने आकर कुछ याचना की इस पर कबीर ने कहाः—

जो देखा सो दुखिया देखा तनु धरि सुखी न देखा।
उदय अस्त की बात कहत हौं ताकर करहु बिवेका।
बाटे बाटे सब कोई दुखिया क्या गिरही बैरागी।
शुकाचार्य दुखही के कारण गर्भहि माया त्यागी।
योगी दुखिया जंगम दुखिया तापस को दुख दूना।
आशा तृष्णा सब घट व्यापे कोई महल न सूना।
सांच कहौं तो सब जग खीजे झूठ कहो नहिं जाई।
कहत कबीर तेई भे दुखिया जिन जह राह चलाई।

कबीर साहब का यह कहना कि संसार में दुःख ही दुःख है बहुत ठीक है। उस ग़रीब पुरुष को कबीर साहब की यह बाणी सुन कर बहुत सन्तोष हुआ। कबीर के जन्म की बाबत जिस तरह ठीक ठीक पता नहीं चलता उसी तरह उनकी मृत्यु काशी के समीप मगहर में

हुई यह बात तो ठीक है; परन्तु कब हुई, इस का ठीक ठीक पता नहीं लगता। कोई लोग कहते हैं कि उन्होंने १२० वर्ष के हो कर तनत्यागा, कोई कहता है कि ३०० वर्ष के हो कर परलोक सिधारे। मृत्यु का सन् १४४८ लोग अनुमान करते हैं। उनकी मृत्यु की बाबत यह दन्त कथा प्रसिद्ध है कि जब वह मरे तब मुसल्मान उन की लाश को गाड़ना और हिन्दू जलाना चाहते थे। दोनों के आपस में खूब झगड़ा हुआ। अन्त में जब उनकी लाश पर से कपड़ा या कफ़न हटाया गया तो उनकी छाती पर तुलसी पत्र और सब्जा दो चीजें निकलीं। यह देख कर दोनों ने अपनी अपनी परिपाटी के अनुसार उनका अन्तिम संस्कार किया। मगहर में उनकी समाधि बनी है। वहीं पर मुसल्मानो ने उनकी क़बर बनवाई है। एक ओर समाधि दूसरी ओर कबर है; बीच में एक दीवाल खड़ी है॥

मुसल्मानी राज्य की ओर से ७००० की जागीर समाधि के खर्चे के लिये अब तक बराबर चली आती है। हिन्दू मुसल्मान दोनो में झगड़ा होने के कारण वृटिश-सरकार ने दोनों को आधी आधी जागीर बांट दी। उनकी समाधि पर हरसाल अगहन सुदी ११ को बहुत बड़ा मेला लगता है। हिन्दू मुसल्मान दोनों धर्म के हज़ारों लोग वहां दूर दूर से यात्रा के लिये आते हैं। वहां एक बहुत बड़े आश्चर्य की बात देखने में आती है कि हिन्दू यात्री कबीर साहब की क़बर के पास भी दर्शन करने जाते हैं; परन्तु एक भी मुसलमान समाधि की ओर दर्शन करने नहीं आता!

कबीर पंथी लोग एक ही जाति के नहीं होते; अर्थात् कबीर पंथ में हर जाति के लोग शामिल हो सकते हैं। हिन्दू मुसल्मान दोनों उन के अनुयायी हैं। इस पंथ को स्वीकार करने पर धर्म त्याग नहीं करना पड़ता; न तो विप्तसमा ही लेना पड़ता है; न सुन्नत की ही

ज़रूरत है। जो लोग मद्य मांस का सेवन नहीं करते असत्याचरण नहीं करते पाप नहीं करते उन्हीं को उस धर्म में प्रवेश करने का अधिकार है। जो उपरोक्त बातों के त्याग की क़सम खाता है वही कबीर पंथी हो सकता है। सदाचार का संस्कार ही कबीर पंथी होने के लिये काफ़ी है। जाति बदलौवल की इस में ज़रूरत नहीं। कबीर पंथी होने के लिये स्वयं कबीर साहब ने तरकीब लिखा है;—

भूलो भोग मुक्ति जन भूलौ। योग युक्ति तन साधो हो।
जो यहि भांति करहु मत वारी। तामत के चित बांधो हो।

कबीर पंथी लोगों का ऐसा विश्वास है कि कबीर साहब ने कभी बिबाह नही किया। कबीर साहब के कमाल नाम का एक पुत्र था; यह बात कई एक ग्रन्थों में लिखी है पर वे लोग इस बात पर विश्वास नहीं करते उनका कथन है कि कमाल उनका पुत्र नहीं शिष्य था। वह भी कबीर साहब के ही समान विरक्त और भक्ति मार्ग का उपदेशक था।

कबीर साहब की पुस्तकें पढ़ने है चित्त को शान्ति मिलती है; ईश्वर की भक्ति उत्पन्न होती है, बुरे कर्मो से उदासीनता और संसार की असारता से बिरक्ति उत्पन्न होती है। अब हम यहां पर उनकी साखी से कुछ दोहे लिख उनकी जीवनी को समाप्त करते हैं।

हंसा बक यक रंग लखिय चरें एक ही ताल।
क्षीर नीर तें जानिये बक उघरें तेहि काल।
पांच तत्व का पूतरा मानुष धरिया नाउं।
एक कला के बिछुरते बिकल भया सब ठाउं। २।
सब तें सांचा है भला जो सांचा दिल होय।
सांच बिना सुख नाहिंना कोटि करे जो कोय। ३।
सांचा सौदा कीजिये, अपने मन में जानि।
सांचे हीरा पाइये, झूठे पूरी हानि। ३।

मन सागर मनसा लहरि, बूड़े बहे अनेक।
कह कबीर ते बाचिहैं, जिन के हृदय विवेक। ५।
चक्की चलती देखिकै रहा कबीरा रोय।
दो पट भीतर आय के साबुत गया न कोय। ६।
पक्षा पक्षी कारणों सब जग रहा भुलान,
निरपक्ष ह्वै हरि भजैं तेई सन्त सुजान। ७।
माया त्यागे क्या भया, मान तजा नहि जाय,
जेहि माने मुनिवर ठगे, मान सबन को खाय। ८।
मूरख के समुझावते, ज्ञान गांठि को लाय।
कोयल होय न ऊजरो, नौ मन साबुन खाय। ९।
हीरा वही सराहिये, सहे घनन की चोट।
कपट कुरङ्गी मानवा, परखत निकला खोट। १०।
हीरा तहां न खोलिये, जहं कुंजरी की हाट।
सहजे गांठी बांधि के, लगी आपनी बाट। ११।
मूरख सों क्या बोलिये, शठ सों कहा बसाय।
पाहन में क्या मानिये, चोखा नीर नशाय। १२।
ऊपर की दोऊ गईं, हिय की गईं हेराय।
कह कबीर चारों गईं, तासों कहा बिसाय। १३।
हम जान्यो कुल हंस हो, तातें कीन्हो संग,
जो जनतो बक वरण हो, छुवत न दे तो अंग। १४।
गुणिया तो गुण को गहे, निरगुण गुणहि घिनाय।
बैलहि दीजै जायफर, क्या बूझै क्या खाय। १५।
काजर केरी कोठरी बूड़न्ता संसार।
बलिहारी तेहि पुरुष की, पैठि निकासन हार। १६।
हद्द चलै सो मानवा, बेहद्द चलै सो साध।
हद बेहद दोनों तजे, ताको मता अगाध। १७।

धर्मो रक्षति रक्षितः ।

"धर्म की जो रक्षा करता है उस की धर्म स्वयं रक्षा करता है।" धर्म शास्त्र के इस बचन के अनुसार वर्ताव हमारे जीवन के सफल होने का हेतु है। जिस से हम इसी शरीर से देवत्व को प्राप्त कर सक्ते हैं। निज कल्याण की इच्छा रखने वाला धर्म के काम में पक्का न हुआ तो उस के आत्मा को शान्ति और चित्त में प्रसन्नता कभी हो ही गी नहीं। जिन की आत्मा निष्पाप और जिन का चित्त विमल है उनको उबलता हुआ तेल का कड़ाहा भी बर्फ़ का सा ठंढक देने वाला है मलिन अन्तःकरण और पापात्मा कोजूहीका हार भी जलते हुये अङ्गार का सा व्यथा देता है। इस धर्म के कई एक साधन हैं जिन में सब से बड़ा साधन आत्म मर्यादा है जिसे अपनी मर्याद् बनाये रखने का ध्यान है उस का आचार और वर्ताव उच्च श्रेणी का होता है। जितना ही अधिक आत्म मर्यादा की ओर दृष्टि रहेगी उतनाही उस का शुद्ध आचरण होगा निन्द्य कर्म की ओर उतना ही अधिक उसका कम चित्त जागगा। आत्म मर्यादा का सोपान आत्म गौरव है और इस कल्याण करी विद्या की वर्णमाला सदाचार है जो एक ऐसा धन है कि संपद् और विपद् दोनों में घटता बढ़ता नहीं। इस ऐश्वर्य्य से जो समृद्ध हैं वे अभ्युदय की मोह मदिरा से मतवाले नहीं होते। जगत् पूज्या जनकजा वैदेही इसका आदर्श स्वरूप हो गई हैं जिन का हिमालय सा अचल हृदय और सागर गंभीर मन बनबास का दुःख सहते हुये भी आत्म मर्यादा से विमुख न हुआ। रावण के अनेक प्रलोभन पर भी पातिव्रत की मर्यादा को न छोड़ा। दमयन्ती सावित्री प्रभृति कितनी स्त्रियां इसी आत्म मर्यादा पालन ही से ललना गणों में सर्व श्रेष्ठ हो गई हैं। पुरुषों में राम और युधिष्ठिर तथा आबाल ब्रह्मचारी भीष्म इसी मर्यादा पालन के कारण सर्व मान्य हुये। तो सिद्ध हुआ कि आत्म मर्यादा धर्म का प्रधान अंग

है और "धर्मोरक्षतिरक्षितः" इस वाक्य का तात्पर्य अधिकतर आत्म मर्यादा की रक्षा है ॥

जयनारायण सहाय ।
रांची ।

योग दर्शन भोज वृत्ति सहित।

गुरुकुल सेवि-पं-भीमसेन शर्मा अनुवादित । उक्त पण्डित जी ने इस के अनुबाद में अपनी पूरी योग्यता प्रगट कर दिखाई है । जैसा स्पष्ट अनुवाद यह किया गया है वैसा और दो एक अनुवाद योग दर्शन के जो पहिले और २ लोगों ने किये नहीं हुआ । भोज की वृत्ति का भी साथ ही साथ यथोचित स्पष्टार्थ मानो सुवर्ण में हीरा सा जड़ दिया गया है । दर्शनों में रुचि रखने वालों को इस का संग्रह अवश्य करना चाहिये । मूल्य १।।) है सद्धर्म प्रचारक प्रेस जालन्धर में पं० अनन्तराम जी द्वारा मुद्रित और प्रकाशित ॥

व्यय ।

इस नाम की पुस्तक को मिश्र उपाधि धारी भ्रातृ जुगल ने रच सर्व साधारण का बड़ा उपकार किया है । इस पुस्तक का पाठ उन को अवश्य सुनाना चाहिये जिन की आंख में धन के मद की गरमी छाई हुई है । जैसा इसी पुस्तक में लिखा है १००) के नोट में "वर्ड्स आई" लपेट लखनऊ के एक कुलकंटक पी गये । हम मिश्र युगल से अनुरोध करते हैं कि इस पुस्तक के दूसरे संस्करण में दो एक तरह के व्यय जो इस निष्किंचन हिन्दुस्तान में सीमा के बाहर हो गये हैं उनका भी ज़िक्रि कर देंगे । जैसा हाल में महाराज काश्मीर ने ३६ घण्टे में ६ लाख रुपये पर पानी फेर दिया । पुस्तक में एक जगह लिखा है "चीन द्रोही एक ज़क उठा सम्हल रहा है हम हज़ारों ज़कें उठाते हुये भी नहीं सम्हलते" । ग्रन्थकर्ता महाशय यह किसे जोश दिला रहे हैं । क्या यह चेत उन्हें नहीं है कि यह हिन्दुस्तान है यहां आप का जोश दिलाना

कभी कारगार नहीं हो सक्ता। हमें तो कुछ ऐसा ही भावता है कि जो कुआं में गिरता हो उसे उस कुआं से निकलने के बदले एक पत्थर उस के ऊपर कुये में और फेक दें जिस में वह डूब ही जाय और कुछ कसर बाकी न रहे। अस्तु पुस्तक यह बड़ी उत्तम है मूल्य ।)

दो।

काशी के भारतेन्दु में एक लेख एक के महत्व का निकला है उसे पढ़ हम आज दो के विस्तार की निराली वेसुरीली तान छेड़ बैठे हैं। चलिये पहिले चर अचर इस दो प्रकार की रचना से आरम्भ करते हैं। प्रकृति और पुरुष दो न होते तो पुरुष पद वाच्य एक अकेला क्या कर सक्ता। प्रकृति और पुरुष दोनों मिले तब सृष्टि की यह चर अचर सब रचना रची गई। एक की एकाई तभी तक है जब दो नहीं हुये। "इस लिये तस्वीर जाना हम ने खिचवाई नहीं। एक से जब दो हुये तो लुत्फ़ एकताई नहीं" बिना एक दूसरा प्रतिद्वन्दी हुये एक कभी शोभा नहीं पाता या कदर के लायक होता है। उजाले की कदर कब होती जो दूसरा उसके मुकाबिले का अंधियारा न होता। एक और एक ११ भी तभी है जब एक को दो बार लिखते या काम में लाते हैं। एक अकेला कैसाही प्रवल और समर्थ हो जब तक दो उस के और सहायक न हों कुछ नहीं कर सक्ता किया भी तो उसका काम अधूरा रहता है। कहा भी है "सर्वज्ञस्यापि एकाकिनो निर्णयाभ्युपगमोदोषाय" कैसा ही सर्वज्ञ हो पर अकेला बिना दूसरे की सलाह के या विना किसी दूसरे से पूछे किसी बात को तै कर डाले तो वह उसका काम दोष से खाली नहीं है। सृष्टिकर्ता ने सर्जित पदार्थों को बहुधा दो दो का एक जोड़ा सृजा है उन का फुट हो जाना फिर किसी काम का नहीं रहता। इस से निश्चय हुआ कि एक को एक दूसरे की आपेक्षा अवश्य रहती है। बहुत कम ऐसे पदार्थ हैं जो अपने मुकाविले का दूसरा न रखते हों तो सिद्ध हुआ कि एक यह पह संख्या अवश्य द्वितीय सापेक्ष है॥

स्वदेशी कजली।

अब जनि बिलम लगावहु कछु तुम शुभ अवसर यह आयो रामा
हरि हरि घर घर करहु स्वदेशी को प्रचारा रे हरी। टेक ॥ १
काहे निपट निकम्बी वस्तुन लेवन मां चित लायो रामा
हरि हरि दै विदेश, धन जनि फूंकौ घर सारा रे हरी ॥ २
हा! चटकीली वस्तु विदेशी भारत भर है छायो रामा।
हरि हरि सब भारत वस्तुन गारत करि डारा रे हरी ॥ ३
भये विदेश-विलासी क्यों सब का तुम को भरमायो रामा?
हरि हरि करत घृणा निज देश, विदेश पियारा रे हरी ॥ ४
जेहि के बल जग सभ्य भयो सब जेहि जग ज्ञान सिखाया रामा
हरि हरि नाम धाम सो डूबो सबहि हमारा रे हरी ॥ ५
ताली दै दै हंसत हमैं, सब नीच असभ्य बनाया रामा।
हरि हरि तौहूं धिक! तुम करत विदेश पियारा रे हरी ॥ ६
जानहु का नहिं पुन्य भूमि भारत हरि अहै बनायो रामा।
हरि हरि होत जहां तृण शस्य अनाज अपारा रे हरी ॥ ७
जल थल सरिता सर उपवन बन मुनि मन लेत लुभायो रामा
हरि हरि प्रकृति देवि की छवि है जहं सुख द्वारा रे हरी ॥ ८
सुख सम्पति दाता-भारत की सेवा ध्यान लगाओ रामा।
हरि हरि धन जन मन अर्पण सब करहु तुम्हारा रे हरी ॥ ९
स्वास वायु जब लौं जीवन महं 'जय श्री भारत' गाओ रामा।
हरि हरि देवहु तुरत विदेशी वस्तुन जारा रे हरी ॥ १०
"खाओ, पहिनौं ओढ़ौ, देओ, लेओ जो मन भायो रामा"।
हरि हरि सो सब होय स्वदेशी यहि प्रण धारा रे हरी ॥ ११

पाण्डेय लोचन प्रसाद (बालपुर)

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ } प्रयाग { सितम्बर
सं० ६ } { सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज ३)

—:००:—

जि० २८ सं० ९ } प्रयाग { सितम्बर सन् १९०६ ई०

भारत का काया पलट।

जैसा कोई एक करवट सोते २ थक कर दूसरी करवट बदलता है वैसाही भारत अनादि काल से एक ही ढङ्ग पर ढुलकता हुआ करवट बदलने की भांत अपनी काया को पलट रहा है। और यह काया पलट किसी एक अंश में हुआ सो नहीं वरन धर्मनीति समाजनीति राजनीति जिस में टटोलो उसी में आकाश और पाताल का अन्तर देख पड़ता है। सब छोड़ पहिले हम भारत की धर्मनीति की आलोचना करते हैं। यहां के धर्म में क्या २ काया पलट हुई और होती जाती है सो दिखलाते हैं। पहिले तो धर्म एक ऐसा विषय है जो केवल समाज के आधार पर चलता है। समाज जहां तक परिस्कृत, सभ्य और बुद्धि

वैभव में आगे बढ़ी होगी धर्म भी उस समाज का उतनाही परिस्कृत प्रभावशाली सत्य और उत्कृष्ट होगा। इस तरह का हमारा शुद्ध आर्य वैदिक धर्म है; उस समय सब का एक धर्म; एक तरह की विचार प्रणाली; एक प्रथा; एक रीति नीति थी। सब लोग एक मत थे और आध्यात्मिक क्रम पर एक ईश्वर की आराधना ध्यान और धारणा के द्वारा करते थे। उस समय समाज उन्नति की अन्तिम सीमा को पहुंची हुई थी। इस समय के विविध विज्ञान और अनेक कलाओं की चाहो इतनी तरक्की न रही हो पर सब लोग बड़े सच्चरित्र, साधु भाव पूर्ण, सच्चे, बात के धनी, अध्यवसायी, अलोलुप, गम्भीर प्रकृति उत्साह और पौरूषेयगुण विशिष्ट थे। ऋग्वेद की अनेक ऋचायें हैं जिस से स्पस्ट है कि भौतिक पदार्थों का ज्ञान उन आर्यों को भरपूर था, कहीं २ आधुनिक विज्ञानों की भी झलक पाई जाती है भारत के वे दिन कैसी तरक्की के रहे होंगे यह सोच, चित्त चकृत होता है। पर ऐसा समय बहुत दिन तक न रहा केवल आध्यात्मिक आराधना छोड़; सूर्य मण्डल, अग्नि, जल, और स्थंडिलों में ईश्वर की आराधना करने लगे। यज्ञ का क्रम निकला, पशु के वलिदान की प्रथा चल पड़ी किन्तु उनके किसी पौरूषेय गुण में कहीं से त्रुटि न हुई। इसी समय यज्ञ में अधिक हिंसा देख संशोधन के ढङ्ग पर जैन और बौद्ध मत का प्रादुर्भाव हुआ; पीछे गौतम बुद्ध के नाम से बड़े पूर्ण विद्वान् और जैन मत के कई एक तीर्थंकर पैदा हो जैन और बौद्ध धर्म की बड़ी उन्नति की। इस समय तक राजनैतिक विचार या प्रबन्ध में कोई तरह का टूटा न आया था न हिन्दुस्तान में कौमीयत पर कोई ज़वाल आया था किन्तु द्वैविध्य का बीज बो गया और शुद्ध वैदिक आर्य धर्म पर कुल्हाड़ा चलना आरम्भ हो गया। आर्य लोग पीछे अग्नि सूर्य जल और स्थंडिलों पर ईश्वर को पूजने लगे थे जैन और बौद्धों ने मूर्ति बनाना आरम्भ किया और पौत्तलिकता

प्रारम्भ हुई इसी समय Six Schools of Philosophy षट् दर्शनों की नेवपड़ी जिस में कपिल कणाद और अक्षपाद तो बहुत पहिले हुये जैमिनि पतञ्जलि और व्यास पीछे हुये उस में भी व्यास देव ऐसा मालूम होता है कि सब के पीछे हुये। भाषा भी एक नई प्रकार की प्राकृती के नाम से प्रचलित हुई वेद की भाषा अलग कर दी गई। इसी समय एक और भाषा संस्कृत के नाम से निकली स्मृति और पुराणों की सृष्टि भी इसी समय हुई। पुराण सब इसी संस्कृत में लिखे गये और यह लोक की भाषा कही गई "सर्वत्रविभाषागोः" इस सूत्र की वृत्ति में दीक्षित ने सर्वत्र को साफ कर दिया है "लोके वेदे चैङन्तस्य गोरतिवा प्रकृतिभावः स्यात् पदान्ते" "लोक और वेद दोनों में एङन्तगो शब्द को प्रकृति भाव ही विकल्प कर पदान्त में"। तो निश्चय हुआ कि संस्कृत लोक भाषा उस समय मानी गई थी और बराबर इस की तरक्की होती गई। उपनिषद् और गृह्यसूत्रों को छोड़ जिस में कहीं २ पर वैदिक लिखावट का अनुकरण किया गया है बाकी समग्र संस्कृत ग्रन्थ समूह क्हो दर्शन, पुराण, काव्य, कोष, अलंकार; ज्योतिष, वैद्यक, षडंग के सब ग्रन्थ, इसी भाषा में हैं। सच पूछो तो वेद की भाषा हम लोगों के लिये इस समय अजनबी सी हो रही है। संस्कृत का सुबोध पण्डित वेद के तात्पर्य को कुछ नहीं समझ सक्ता। यद्यपि पाणिनि महामुनि ने अपना व्याकरण इसी उद्देश्य से बनाया था कि उन का व्याकरण जानने वाला लोक और वेद दोनों भाषाओं में सुबोध और प्रवीण हो जाय किन्तु इन दिनों का पठन पाठन कुछ ऐसे क्रम का हो गया है कि हमलोग वैदिकभाग बिल्कुल अलग कर व्याकरण पढ़ते हैं। दीक्षित ने सिद्धान्त कौमुदी में स्वर वैदिकी का प्रकरण ही अलग कर दिया। तिङन्त में लेट् पंचम लकार को बिल्कुल छोड़ देते हैं इस लिये कि लेट् का रूप केवल वेद में होता है लोक में नहीं। दीक्षित ने लिख भी दिया है "एषुपंचमोलकारश्छन्दोमात्र गोचरः"

पुराण की सृष्टि के साथ ही साथ देश में एक धर्म एक मत में जैसा झूलसी सवार हो गई। हम पहले कह आये हैं जैन और बौद्ध मत के साथही साथ द्वैविध्य शुरू हो गया था; पुराणों ने पंचायतन पूजन निकाली शैव शाक्त वैष्णव गाणपत्य और सौर ये भिन्न २ टुकड़े आर्यमत के हो गये। पुजाने वाले लोभी ब्राह्मणों की बन पड़ी जो अब तक नये २ पुराण बनाते जाते हैं। अपना महत्व स्थापित करने और गुरु बनने को प्रजा में जिस की जैसी रुचि देखा तदनुकूल गीत पुराणों में गा चले। पांच तो ये प्रधान टुकड़े थे अब इन की शाखा प्रशाखा कितनी है उसे कौन गिना सक्ता है। एक वैष्णवोंही की ४ संप्रदाय हैं और उस चार के भी न जानिये कितने टुकड़े हैं। रामोपासक और कृष्णोपासक के दो बड़े टुकड़े तो हई हैं कृष्णोपासक आपस में एक दूसरे से बड़ा विरोध रखते हैं। पुष्टिमार्ग वाले कृष्ण की किसी दूसरी मूर्ति को प्रणाम करना और उन का प्रसाद खाना अपनी अनन्यता की बड़ी हानि मानते हैं। परिणाम में गोकुलस्थी गुसाइयों की वैष्णवों की और संप्रदायवालों से नहीं बनती। कहने को ये सब वैदिक धर्म के अनुयायी अपने को मानते हैं पर वैदिक क्रम के अनुसार की इन में बहुत थोड़ी बात है। चारो वेद चाहो पढ़ा हो और बैदिक कर्मों का अनुष्ठान भी करता हो पर कण्ठी न बांधे हो या चक्रांकित न हो तो उस के हाथ का पानी न पियेंगे। शूद्र भी कण्ठीबन्ध या चक्रांकित उनके यहां ब्राह्मणों से श्रेष्ठ माना जाता है॥

पुराणों के उपरान्त तन्त्रों की कल्पना की गई और उस के दक्षिण और वाम के भेद से दो खण्ड किये गये; पुराण वालों ने तो फिर भी वेद की आड़ में रख जैसा समय देखा और जैसी रूचि प्रजा की पाया उसी के अनुसार थोड़ा नोन मिर्च उस में मिलाया पर तांत्रिकों ने तो वेद को उखाड़ ही डालने का प्रयत्न किया जो इस बात को सिद्ध करते हैं कि उनके बीज मंत्रों में जो शक्ति है वह वेद की

ऋचाओं में नहीं है। अस्तु पुराण और तंत्रोंही से धर्म सम्बन्ध में हमारे अधःपात का ओर आ गया हो सो नहीं कबीर, नान्हक, दादू, रइदास, हाल में सन्त मत; ये सब वेद और धर्म में हमारे ऐक्य पर बराबर चोट देते गये। और नीचे चलिये तो भूत प्रेत गाज़ीनियां और पांच पीर हमारे धर्म के अंग होते देख पड़ते हैं। हमारे विज्ञ पाठक जान गये होंगे कि धर्म सम्बन्ध में कहां तक भारत का काया पलट होता गया अब समाज को लीजिये॥

पुराने लेख को टटोलने से प्रगट होता है कि वैदिक ऋषियों के समय समाज हमारी सर्वथा निर्दोष थी चार वरण की प्रथा जब से निकली तब से जिस का जो काम था उसे करते सुख से समय बिताते थे। भारत की उर्वराभूमि और वर्ष में तीन बार ऋतुओं के अदल बदल का फाइदा उठाते हुये अपने ही देश के राजा से शासित हो प्रजा राजा से सन्तुष्ट रहती थी और राजा प्रजा से। हजारों वर्ष तक हमारी सुस्थिर समाज में किसी को किसी से किसी बात की शिकायत न थी, अशान्ति कैसी होती है कोई जानता ही न था। इन दिनों की सी जुआ चोरी का तब कहीं नाम भी न था; जाल फरेब लोगों में स्थान न पाये था न इस समय के अनेक अपराध Crimes तब समाज में प्रचलित थे। इस लिये कानूनों की इतनी बारीकी भी तब न थी अब के समान तब लोग ज़रा २ सी बात के लिये अदालत में नहीं दौड़ते थे न स्टैम्प और कार्ट फीस का इतना जब्र तब इंसाफ और न्याय ढूंढ़ने वालों पर था। विदेशियों का कहीं से संपर्क भी तब न था इस से इन की सब रीति नीति रहन सहन खान पान शुद्ध आर्य क्रम का था। आपस में एक को दूसरे के साथ भरपूर सहानुभूति थी, स्वार्थ की तब गन्धि भी न थी अपना देश अपनी समाज का पक्षपात कैसा वरन मनुष्य मात्र के साथ अपनापन था "उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्" यह उसी समय की शिक्षा है। सामाजिक बल जब उन में इतना था

तो बाहरी शत्रुओं में किसी का इतना साहस न होता था कि आक्रमण करे; कभी किसी ने आक्रमण किया भी तो मुह की खा हार कर यहां से लौटते ही बनता था । देवासुर संग्राम आदि कई किस्से इस के उदाहरण हैं । भूरी भरे भरी ढरकावै वाली कहावत के अनुसार परमात्मा का न जानिये कैसा कर्तव्य हुआ करता है कि उर्वराभूमि में कांटे के समान जैन और बौद्ध यहां आप से आप पैदा हो गये और वैदिक समय का सा ऐक्य न रह गया समाज में आपस की सहानुभूति के दो तीन टुकड़े हो गये। और अब जो बाहर का आक्रमण यहां हुआ उन के मुकाबिले इन की हार होती गई । इस समय सिकन्दर आदि कई एक जगद्विजयी वीर पश्चिम के देशों में उपज खड़े हुये । उपरान्त महम्मद हुये जिस ने अरब के आस पास के देशों में अपना मुसल्मानी मज़हब स्थापित किया। जब कोई नया मज़हब कायम होता है तो थोड़े दिन उस का पूरा जोश रहता है उसी जोश के सबब मध्य एशिया में कई सौ वर्ष तक मुसल्मान बराबर जयी होते गये । इधर हिन्दुस्तान में महाभारत के कराल युद्ध के उपरान्त बड़ी निर्बलता छा गई प्रसिद्ध२ वीर बांकुरे सब इस महासंग्राम में कट मरे; समाज जर्जरित सी होने लगी; ईश्वराराधन का वेदोक्त क्रम घट चला था; पौत्तलिकता देश भर में व्याप्त हो गई थी; अनेक मत और अनेक दर्शनो के हो जाने से कौमीयत और मुल्की जोश कहीं न बच रहा । शंकर और रामानुज प्रभृति दार्शनिक विद्वान् आपस के खण्डन मण्डन में लग गये घर के द्वार पर यवनों ने आकर क्या२ उपद्रव और अत्याचार फैला रक्खा किसी को कुछ खबर न रही । इधर सोमनाथ का मन्दिर लुटता था उधर साहित्य अलंकार व्याकरण और दूसरे२ शास्त्रीय विषय के वाचस्पति सरीखे महा पण्डित वाद के अनेक ग्रन्थ तैयार कर रहे थे । समाज बिल्कुल छिन भिन्न हो गई थी वैदिक समय के पौरूषेय गुणों का विसर्जन हो चला था । देश की ऐसी क्षीण दशा में मुसल्मानों

को यहां अपना राजत्व स्थापित करना बहुत सहज हो गया। यह सदा का क्रम चला आया है कि शासित जाति अपनी हर एक बातों में शासनकर्ता के अनुकरण को बड़ी प्रतिष्ठा और गौरव का हेतु मानती है; इस दशा में हम अपनी हर एक बातों में मुसल्मानों का अनुकरण करते २ अर्द्ध यवन हो गये। पुरानी आर्यता अब केवल आभास मात्र को बच रही है। हमलोगों का समाज में यावनिक वर्ताव सिद्ध करता है कि हम कहां तक अपने स्वरूप को भूल गये। कौमीयत तथा मुल्की जोश कहां तक हमारे में विलुप्तप्राय हो गया। आगे बढ़ने और तरक्की के लिये पहिले हमे खोये हुये अपने स्वरूप की पहचान पहली बात है। अस्तु इन मुसल्मानों ने कर बल छल से जैसे बना देश से हिन्दुआनी को मिटाने और जड़ से उसे उछिन्न कर देने में कोई बात छोड़ न रक्खी पर "हूै है वही जो राम रच राखा" मुसल्मानों ने जितना ही मूर्ति पूजन को उखाड़ना चाहा उतनाही इस की जड़ पुष्ट होती गई। वल्लभाचार्य चैतन्य महाप्रभु हित हरवंश सनातन गोस्वामी आदि महानुभाव सूर तुलसी ऐसे परम भक्त कवि इसी समय हुये। जिन्हों ने नवधा भक्ति और आराध्य देव की सेवा का क्रम निकाल मूर्ति पूजन की जड़ पुष्ट कर दिया। अब इस समय के लोग मूर्ति पूजन को चाहो जितना बुरा कहैं और उस के खण्डन में चाहो जितनी लियाकत और विद्वत्ता प्रगट करें पर मुसल्मानों के ॥महा अत्याचार के समय हिन्दुआनी जीवित रखने को यही अमृत संजीवनी हुई नहीं तो हमारी आर्यता का अंकुर भी न रह जाता। जब पेड़ मुरझाने से बच रहा और कायम है तब उसे सींच कर बढ़ा देना कौन सा मुशकिल काम है। इस समय मुसल्मानों के अत्याचार से प्राण की रक्षा कठिन हो गई थी तब समाज में मुल्की जोश का होना कैसा? और न तब मुल्की जोश की इतनी ज़रूरत थी इस लिये कि ये मुसल्मान अपने मुल्क में बस गये थे यहां का धन यहीं रहता था केवल धर्म सम्बन्ध में उन का अत्याचार था इसी से मज़हबी जोश की रोज़ २ तरक्की अलबत्ता

होती गई जो अब तक कायम है। किसी धर्म सम्बन्ध में देश का देश टूट पड़ता है मुल्क के नफा नुकसान की बड़ी से बड़ी बात बड़े से बड़े कानून चुपचाप पास हो जाते हैं किसी को मालूम नहीं होता। अस्तु अंगरेज़ों के आने पर ये मुसल्मान भी अपनी सब बहादुरी भूल हमी लोगों के समान भेड़ बकरी से हो गये पर समाज सर्वथा अस्त व्यस्त हो गई। अब जो दशा हमारी समाज देश तथा जाति की है सब पर प्रगट है विशेष पल्लवित करना पाठकों का बहुमूल्य समय नष्ट करना है॥

अब राजनीति में भारत का क्या काया पलट हुआ सो विचार करते हैं। राजनीति में ऐसी काट छांट जैसी इस समय यूरोप के देशों में है भारत में कभी न थी। Monarchy "ऐसा राज्य जिस में राजा जो चाहे सो कर डाले" शासन का यह क्रम मुसल्मान बादशाहों के समय तक यहां रहा। पुराणो में दो एक ऐसे भी इतिहास पाये जाते हैं जिस में प्रजा प्रभुत्व शासन Republic Government भी दो एक बार हो गया था पर बहुत ही थोड़े समय तक यह प्रजा प्रभुत्व शासन रहा। रामायण के समय से भारत के समय तक में राज्य लिप्सा और नीति कुटिलाई में कितना अन्तर हो गया था कि रामायण में जिस राज्य को भरत ने भाई रामचन्द्र को देने के लिये उन की बड़ी खुशामद किया और रामचन्द्र स्वीकार न कर १४ वर्ष बन में रहे। महाभारत में उसी राज्य के लिये भाई २ कौरव पाण्डव कट मरे। यह अंगरेज़ी शिक्षा का प्रभाव है कि हम राजनीति की बारीकियां समझने लगे हैं। यद्यपि पेशवाओं के समय महाराष्ट्रों में नाना फड़नवीस सखा राम बापू ऐसे, और हाल में सर सालार जंग, सर टी माधवराव, नैपाल में जङ्गबहादुर, ऐसे कई एक परिस्कृत मस्तिष्क के लोग हो गये हैं जो यूरोप के बड़े २ नामी राजनीतिज्ञों से कम प्रवीण न थे। किन्तु अब इस समय एक २ घराने में ऐसे नीति कुशल पुरुषों की ज़रूरत है और

जब तक ऐसा न होगा तब तक देश के उद्धार की कम संभावना है। जिस समय यहां ईस्ट इण्डिया कम्पनी स्थापित हुई उस समय यहां के लोग प्रति दिन की राज विराजी से इतना भरे पचे थे कि कोई स्थिर शासन चाहते थे। उधर कम्पनी के अधिकारीपुरुष नीति की काट छांट में परम प्रवीण छटे टैइयां यहां के अत्यन्त बुद्दुड़ और ऐयाशी में डूबे हुये वालियान मुल्क बड़े २ नौवाब और राजाओं को उल्लू बना मुल्क पर मुल्क निगलते गये। अब जो हमें कुछ चेत आई है तो हाथ मलते हुये पछता रहे हैं पर हमारे शासकों ने हमें ऐसा जकड़ रक्खा है कि हमारी एक नहीं चलती। स्मरण रहे यह ईस्ट इण्डिया कम्पनी विलायत के व्यौपारियों की थी इसी से इनके शासन में वणिक् व्यापार प्रधान है। जब तक स्वच्छन्दता के साथ अपने मन की कर गुज़रने वाले गोरे अधिकारियों की राज सत्ता में स्वच्छन्दता कुछ संकुचित न हो और जब तक यहां वालों को शासन के कुछ अधिकार प्राप्त न हों तब तक हमें राजनीतिज्ञता के लिये प्रयत्न से न चूकना चाहिये और इसी को भारत का राजनैतिक काया कल्प कहेंगे। वैदिक समय के राज नैतिक क्रम से अब के क्रम में बड़ा अन्तर हो गया है। उस समय तपोबंन के समीप पूज्य ऋषियों के पुनीत आश्रमों में स्वाधीनता सम-बुद्धि निर्लोभ इत्यादि नीति के उत्तम २ गुण सिखाये जाते थे प्रजा को पुत्र समान पालना और उन से इतना थोड़ा कर लेना राजाओं को बताया जाता था कि जिस में सर्वसाधारण में उद्वेग न पैदा हो। न्याय का अब की भांत इतना भारी स्टैम्प भी नहीं लिया जाता था। नीति क्या है? अनीति क्या है? राजा का धर्म क्या है? प्रजा का कर्तव्य क्या है? राज्य में स्थिरता प्रजा के प्रसन्न और सुखी रहने पर निर्भर है। इत्यादि की शिक्षा दी जाती थी। मुसल्मानों के राज्य में पुराना आर्य क्रम सब उलट पलट गया था सही पर इमानदारी इत्यादि की स्थिराशैली ऐसी बँध गई थी कि लेन देन में बेइमानी का कोई फरियादी हो कर बादशाह और नौवाबों के दर्बार

में नहीं जाता था। लूट और बटमारी थी पर चोरी नहीं होती थी सब लोग खुश हाल थे तब क्या पड़ी थी कि कोई दूसरे का माल चुरावे। चोरी अधिकतर तभी होती है जब लोग भूखों मरने लगते हैं। अस्तु इस समय राजनैतिक विषयों में भारत का जैसा काया पलट हुआ सो किसी से छिपा नहीं है विशेष पल्लवित करने से क्या लाभ। यह हमने प्रधान २ विषय काया कल्प के दिखाये। छोटी २ बातें भारत के काया कल्प की दिखाने लगें तो न जानिये कितने पेज रंग जा सक्ते हैं और लेख भी फीका हो जाने से पढ़ने वालों को ऊब होवेगी इस से यहीं समाप्त करते हैं।

--:०:--

ठकुर सुहाती।

ठकुर सुहाती कहना वह विद्या है जिसे वही जानते हैं जो कपट कापटिक ज़ाहिरदारी में चुस्त और चालाक हैं। यह वह जादू है जिस का असर कभी खाली जाता ही नहीं। खुशामदी चापलूस को स्वार्थ साधन का यह ऐसा महामंत्र है जिस का अनुष्ठान कभी व्यर्थ होता ही नहीं। अपनी पालिसी के पक्के नीति निपुण लोग कह गये हैं "मूर्खच्छन्दानुवृत्तेन" जिस का तात्पर्य यह हुआ कि चतुर सयाने जिन का सिद्धान्त है "स्वार्थं समुद्धरेत्प्राज्ञः स्वार्थभ्रंशो हि मूर्खता" आंख का अन्धा गांठ का पूरा कोता अकिल वाले के साथ ऐसा मिल बजते हैं कि उसकी हां में हां मिलाते हुये ठकुर सुहाती कह उस से भरपूर अपना मतलब निकाली लेते हैं। उन्हें इस से क्या गर्ज़ कि इस काम से इस मूर्ख की सर्वथा हानि है। उस मूर्ख के विरुद्ध कहते हैं या उस को उस का काम के करने से रोकते हैं तो वह बिगड़ खड़ा होता है तब क्यों तत्व कथन से नाहक अपनी हानि करें। इसी से कहा है "मूर्खंछन्दानुवृत्तेन" मूर्ख को उस के मन की कह राज़ी रक्खे। और भी कहा है॥

"सुवर्णपुष्पां पृथ्वीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः।
शूरश्च कृतविद्यश्च यश्च जानाति सेवितुम्॥

यह पृथ्वी सोने के फूलों से फूली हुई है उस फूल को तोड़ तीनहीं आदमी सोना इकट्ठा कर सक्ते हैं। शूर अर्थात् योद्धा जो रणभूमि में पीछे पांव न रख हथेली पर अपनी जान रख शत्रु से जा भिड़ता है; या वह जो कृतविद्य सकल शास्त्र पारंगत बहु दर्शी आलिम फाज़िल है; अथवा वह जो ठकुर सुहाती कहने में प्रवीण सेवकाई अच्छी तरह जानता है। भारत में इस सेवकाई का कहनाही क्या जहां यह एक हुनर सा हो रहा है बरन देश का देश इस समय कूर और कायरों की जन्म भूमि या उत्पत्ति स्थान है शूरबीर का तो जहां उच्छेदही हो गया। जहां किसी समय वीरसूर और वीर प्रसविनी मा हुआ करती थीं वहां अब पिल्ले पैदा करने वाली शुनी और गीदड़ों को जनने वाली सियारिन बहुत सी हैं। जितनी बीर सू बीर प्रसविनी थीं सब जापान चली गईं और वहां बीर तथा उत्साही पुत्रों को पैदा कर रही हैं। तात्पर्य यह कि जब शूरवीर का अभाव है तो ठकुर सुहाती जो हमारी सेवकाई का सहकारी है उसे रहना ही चाहिये ॥

--:०:--

समालोचक और ग्रन्थकार।

सन्ध्या होने को अब करीब है सूर्य भगवान् अपने कर सहस्त्रों को समेट अस्ताचल के पाहुने हुआ ही चाहते हैं दिन का अन्त और रात्रि का आगम दोनों एक स्थान में मिले हुए हैं मानों एक दूसरे से अलग होने के भय से प्रेमालिङ्गन करते अपनी २ मण्डली को दुखित व हर्षित कर रहे हैं। इन के सँयोग सुख में सभी योग दे रहे हैं मानों इनके वियोग रोग के दूर करने को ईश्वर से चिर उपभोग रूपी औषधि मांग रहे हैं। प्रकृति देवी के गोद में जिन के मोद प्रमोद के विविध दृश्य खिले हुए हैं ॥

इसी समय झपाटे के साथ दोनों हाथ हिलाते, कभी २ अपना माथ छूते, एक पुरुष चला जा रहा है। बदन में कोपीन के सिवाय दूसरा वस्त्र नहीं है। सिर में एक भी बाल नहीं है। दाहिने हांथ में पादत्राण

और बायें में एक कटोरा है। तेल शरीर में चुअचुवा रहा है एक आंख बहुत ही बड़ी है जिस में एक बड़ा सा चश्मा लगा हुआ है। दूसरी आंख बिलकुल छोटी है और उस में चश्मा नहीं है। मूछें बड़ी २ हैं और वे ऐंठ कर बांधी गई हैं। हाथ में रिस्टवाच और पीठ में एक बड़ा भारी गड्ढा है। पैर में चमचमाते हुए विलायती बूट हैं। चलने में यह बड़ा तेज़ है इतना कि मद्रास मेल भी इस के सामने मेंढक है। उम्र इस की जवानी से खसक गई है। इस का मुख पूर्णमासी के चन्द्रमा समान सुन्दराई का घर है। इस प्रकार के विचित्र चित्र को देख चकित हो किसी पुरुष ने पास जा कर पूछा कि 'महाराज आप कौन हैं ?' कृपा पूर्वक अपना वृत्तान्त सुनाइये॥

विचित्र चित्र–हहहहहा (खूब हंसता है) बच्चा तू मुझे नहीं जानता कि मैं कौन हूं। नहीं तो अभी तक तू मेरे पैरों पर गिर पड़ता तू ग्रन्थकार है न ?

वह पुरुष सुन कर–डर सा जाता है और कहता है "महाराज हां" परा आप कौन हैं ? यह बताने की कृपा शीघ्र कीजिये, मैं आप को हाथ जोड़ता हूं।

वि०चि०–अभी तू नया लेखक है। पक्का होने को तुझे अभी कई घाट का पानी पीना है। जूते और गालियां भी खाना है। और इसी से नहीं जानता कि मैं कौन हूं। अच्छा तो तुम्हारी यह भूल हम इस बार माफ कर देते हैं। परन्तु याद रहे कि दूसरे बार देखते ही दूर से हमें साष्टङ्ग दण्डवत् कर हमारी प्रशंसा करने में कभी न चूकना नहीं तो तू क्या तेरा बाप भी बचने न पावेगा। नहीं जानता मैं समालोचक हूं–सब ग्रन्थकारों का बूढ़ा बाप।

ग्रन्थकारः–आप की उत्पत्ति कहां से हुई ?

समालोचक–तू निपट अजान है, इसी से अपना सब वृत्तान्त तुझ से कहे

देता हूं। पर चेत रखना इसे किसी दूसरे से कभी न कहना। सुनो हमारे बाप दादे पहिले दिल के बड़े तंग थे। वे किसी की बढ़ती न देख सकते; बड़े ही ईर्षी थे। पर साथ २ अपने मालिक और आश्रयदाताओं की प्रशंसा भी कभी २ खूब किया करते थे। जब प्रशंसा और ईर्षा से काम न निकल सका तो वे ठठोलबाज़ हो गये। जब कोई अच्छा कपड़ा लत्ता पहिनता उत्तम कोई काम करता तो ज़ीट उड़ाते हुये उस के काम में कुछ न कुछ कमी बताते और मसखरी के साथ कभी उस की तारीफ भी कर देते। इस प्रकार यह गुण परम्परा से हमारे कुल में है, पर यह उन के इस हुनर की बाल्यावस्था थी। जब सभ्यता की रगड़ से बन्दरों की पूंछ तक कट गई और वे भी सभ्य कहेजाने लगे तब ये हमारे बाप दादे तो मनुष्य ही थे इस समय तक उन्हों ने खूब उन्नति कर ली। और अब उस गुण की यौवनावस्था आ पहुंची। तब वे मसखरे के बदले समालोचक (अर्थात् सम=तुल्य भाव से, आलोचक = देखने वाला) कहलाने लगे। उत्तम से उत्तम लेखों में त्रुटि निकालते विशारद तथा बड़े गुणी हो हंसवृत्ति अनुसार ग्रन्थकारों तथा मनुष्यों के गुण दोष (क्षीर नीर) को अलग कर साहित्य की उन्नति करने लगे। पर साथ ही साथ हंसी और व्यङ्ग भी उन के लेखों में देख पड़ते थे।

किन्तु समय ने फिर पलटा खाया। लोग अपनी चाल ढाल बदलने लगे। फेशन और सिबिलिज़ेशन का स्टेशन घर २ द्वार २ हो गया। रीति नीति आदर सत्कार आचार व्यवहार कर्म धर्म के मर्म का किसी को खयाल न रहा। पुरानी राह की चाह किसी को न रही। सभी बातों के अदल बदल में लोग बल छल करने लगे तो यह कब सम्भव कि हम उसी पुरानी लकीर के फकीर बने रह कर धीर बीर कहला सके। हमने भी दुनिया के लोगों के ढङ्ग पर बेवफाई, बेहयाई ढिठाई, और

बुराई के सांचे के ढले हुए पुतले बन कर अपने अङ्ग अङ्ग का रूप रंग बदल; कुसंग रूपी भंग पान कर अपने दिल को ऐसा तंग कर लिया कि कहीं सहृदयता और महानुभावता का लेश भी शेष न रहा। बस तब हम हुए समालोचक (अर्थात सम् = आ×घुसघुस के; लोचक देखने वाला) घुस घुस के केवल दोषों का देखने वाला और उच्चासन में बैठ लगे पुकार२ सभी को यह कहने कि हम Best समालोचक हैं अपनी पुस्तकों की समालोचना हम से कराइये। कभी किसी के ग्रन्थ की समालोचना मनमानी बिना उस की आज्ञा के कर डालते। कभी पत्र लिख २ उन्हें रगड़ा करते कि अमुक २ पुस्तकें भेजो हम उन की समालोचना करें और अभाग्यवश जब हम किसी पत्र के सम्पादक न रहे और न कोई पत्र ही हमारी समालोचना छापने को राज़ी हुआ तो चट् उस को पुस्तकाकार छपाने लगे V. P द्वारा बिना मागें मंगाये सब के पास भेजने और अपना नाम प्रख्यात करने लगे।

ग्रन्थकारः-धन्य हो प्रभो! आप भिन्न २ भाषा की पुस्तकों की समालोचना कैसे कर सक्ते हैं?

समा० (हंस कर) कुछ पूछो मत। हम लोग सभी भाषा जानते हैं:— संस्कृत, हिन्दी, मराठी, बंगला, उड़िया, टामिल, अंगरेज़ी, फ्रेञ्च लेटिन इत्यादि।

ग्रन्थः-आप को तब तो फिर इतनी भाषा जानने के लिये कोड़ियों वर्ष चाहिये।

समा० नहीं, नहीं, प्यारे! हम एक २ महीने में एक २ भाषा सीख लेते हैं; दो महीने में अङ्गरेज़ी पढ़ लिया और आनर पाये हुये B. A. M. A. को भी हमने मात कर दिया। कोई पुस्तक समालोचनार्थ आई और वह भाषा यदि हम

नहीं जानते हैं तो झट लिख दिया कि आप की पुस्तक दो महीने बाद देखी जायगी। इस बीच में उस भाषा की पहिली किताब ले लगे उसे पढ़ने। बस जहां कुछ थोड़ा बहुत पढ़ना आय कि लगे उस शामत के मारे लेखक को मज़ा चखाने; इसी प्रकार हम Jack of all trades, Master of none, हैं। हम में और एक यह गुण है; हम लोग बड़े खुशामदी होते हैं। अपने मित्रों की बड़ी खुशामद करते हैं। उन से लिखा २ कर यह बात पत्रों में छपाते हैं कि "अमुक महाराज संस्कृत, मराठी, गुजराती बंगाली के बड़े भारी पण्डित हैं। हिन्दी में तो इन के नाम का डंका ही बज रहा है, सच्चे समालोचक हैं। बड़े भारी कवि हैं" इत्यादि और कभी २ उनके नाम देकर हम स्वयं ऐसा लिखते हैं ताकि हमारी कीर्ति कौमुदी चारो ओर फैले। हम लोग बड़े कठोर हृदय के होते हैं क्रूरता हमारा एक प्रधान गुण है। मसखरापन तो हमारे नस२ में कूट कर भरा हुआ है। ग्रन्थकारों को ऐसे व्यङ्ग वचन बाण समान बींधते हैं कि पढ़ने वाले हमारी वाहवाह करने लगते हैं हम झूठों के बाप और ग्रन्थकारों के ताप हैं।

ग्रन्थ०—महाराज, यह सब बातें तो मालूम हुईं। पर आप इतने ज्ञानी मानी होकर क्यों असभ्यों की नाईं दीखते हैं?

समा०—मै असभ्यों की नाईं क्यों रहता हूं इसका कारण तुम्हें सुनाता हूं सुनोः—

हमारे शत्रु संसार के चारो ओर फैले हुए हैं वे लोग मुझे अपने फन्दे में ला बदला चुकाने को जोहते रहते हैं। इसी लिये मैंने सब कपड़ा उतार कर बाल भी कटा डाले ताकि वे मुझे पकड़ें तो मैं उन से लड़ सकूं और वे मेरे बाल तक भी न पकड़ सकें। तेल शरीर भर में इस लिये पोते हूं कि उन के हाथ मेरी देह से बिछल जांय और मार पीट कर सकुशल बच जाऊं। उन ग्रन्थकारों का जो हमारे मित्रों में से नहीं हैं इस हाथ के उपानह से उनका स्वागत करते हैं; खूब गालियां दे दे कंटाप से

उनकी पूजा करते हैं। वे चाहे कैसे भी उद्भट विद्वान् क्यों न हों उन्हे मज़ा चखाते ही हैं। कुछ नहीं मिला तो भाव ही पर अथवा प्रूफ की अशुद्धियों को ले उन्हें मूर्ख बनाते हैं। और हमारे मित्र ग्रन्थकारों को दूसरे हाथ में जो अमृत से भरा कटोरा है उसे दे खूब अमृत पिलाते हैं। सुरेश गणेश से भी ऊंचे आसन पर बिठादेते हैं। झूठी प्रशंसा द्वारा उनकी कृपा जीतते हैं। उनकी कैसी भी भद्दी कविता हमें वह कालिदास की कविता के तुल्य विशुद्ध और सरस जंचती हैं। इस बड़ी आंख के बल हम हज़ारों पुस्तकों की समालोचना क्षण भर में कर डालते हैं। बस पेज उलटते गये चश्में के बल से केवल दोष ही देखते गये और लिख मारा; पेज की संख्या इतनी, ग्रंथकार अमुक, छपाई और कागज़ उत्तम, आकार ऐसा पर इसकी भाषा दोष रहित नहीं है ग्रंथकार को ब, व, श ष, स, का ज्ञान नही सन्धि तक उन्हें नहीं आती है।

कविता शायद किसी २ को न रुचे। खड़ी बोली और व्रजभाषा की खिचड़ी हो गई है। कहीं २ यतिभंग दोष है इत्यादि इत्यादि। हम समय के बड़े पाबन्ध हैं इसी से 'रिस्टवाच' हाथ में बांधा गया है। जल्दी इस लिये चलते हैं कि हमें अनेक स्थानमें जाना पड़ता हैं और इस बूट से ज़मीन को ठोकर देते खटखटाते चलते हैं ताकि उस की आवाज़ से ग्रंथकार जान जांय महाराज जी आ रहें हैं और हमारे स्वागत को दौड़ें। मोछें इस लिये बांधी गईं है कि कोई हमारी उम्र न जान सके। यह जो गट्ठा पीठ पर लदा हुआ है उस में हमारे प्रशंसा पत्र हैं जिन्हें सर्ब साधारण को बता कर हम आदर पाते हैं। यही हमारी कहानी है।

ग्रन्थ० - खूब कहा जी खूब कहा।

नहीं और कुछ बाकी रहा॥

लोचनप्रसाद पांडेय॥

—:०:—

श्रीराम पञ्चायतन ।

कबित्त ।

सुन्दर सुखद सनीर नीरद सी कान्ति सो है,
कमल दल शोभा को दलन नैन कीन्हे हैं ।
नासिका को नीकोपन देखि तिलपुष्प लाजैं
किरीट अरु कुण्डल मनु भानुतेज लीन्हें हैं ॥
गनराज, कमललोचन श्रीराम दरस लेन गए, ।
देखे अभिराम राम, भक्त सुख दीन्हैं हैं ।
पीत पटवारे अरु धनुष बान धारे प्रभु
शोभमान होइ सकल विश्व धन्य कीन्हे हैं ॥ १ ॥
व्रीड़ातें आनत ह्वै रह्यौ है मुखचन्द्र जाको,
मधुर चितवन सांचि जन मन हरि लेनी है ।
मङ्गल मुद देनी मृदु हास युत बैनी वह ।
रामा अरु रति को मनु गर्व हर लेनी है ॥
गनराज, अवधराज महाराज प्रिया देखि देखि ।
मन ही मन मुदित होय याहि जिय मानी है,
रामवाम अङ्क पै बिराजमान जनक सुता
सीयरूप मूर्तिमयी सुहाग ही की खानी है ॥ २ ॥
भरत जी से भ्रात बड़ भागिन हू के भए कहूं,
भ्रात चरण भक्ति अरु पूरन प्रेम पागे हैं ।
सहित महोदर कर सत्रुहन चमर धरे,
हरुए अति स्नेह भरे राम सिर ढारे हैं ॥
गनराज, उतै ठाढ़े हैं सुमित्रा के हिय सरोज,
रामपद सेवन करि उज्वल जस धारे हैं ।
वीर सू सुपूतप्यारे, बनवास साथ देन वारे;
बन्धुहित करनहारे, सो मोर पिच्छधारे हैं ॥ ३ ॥

अमितबल, अजातशत्रु, अतिविनीत भाव भरो,
अञ्जनि को अमरपूत कर जुगल बांध्यो है ।
असुरन के सासन हेत लङ्का सी उजारी जिन,
राम काज माथ धरि रत्नाकर लांघ्यो है ॥
गनराज, स्वामिकाज हेत चन्दन सो छीज छीज,
निज परिवार सहित सेतु बन्ध बांध्यो है ।
मनोवेगवारो, बुद्धिमत सिरधारो वही,
राम अरु सुग्रीव प्रीति सन्धि जिन सांध्यो है ॥ ४ ॥
अहा ! श्रीरामचरन सोभा कही जात नहीं,
अरुनहुं की आभा अलि फीकी करन हारे हैं ।
दरसन तें सकल दुरित दारुनहूं दलित होत,
सुमिरन तें नाम निज धाम देन वारे हैं ॥
गनराज, महाराज श्रीरघुराज चरन विलसैं तहं
सन्त भक्त भृङ्गन के वृन्द रमन हारे हैं ।
रघुवंश के दुलारे अति पुनीत चरित वारे वही
मुनि मख रखवारे, श्रीराम जी पधारे हैं ॥ ५ ॥

गणपत जानकीराम दुबे । ग्वालियर.

--:०:--

दुनियां दिन २ तरक्की करती जाती है ।

सरस्वती के सुयोग्यतम सम्पादक ने सरस्वती के इस बार के अंक में विकाश सिद्धान्त Evolution theory पर एक लेख प्रकाशित किया है जिस में उक्त संपादक ने यूरोप के आधुनिक वैज्ञानिकों का विकाश

के सम्बन्ध में क्या मत है और कैसे विकाश का आरम्भ हुआ यह सब बहुत अच्छी तरह दरसाया है। यह विकाश ही की महिमा और विस्तार है कि दुनिया दिन २ तरक्क़ी करती जाती है। सौ वर्ष पहिले जो बात कभी किसी के खयाल में भी न आई थी अब प्रत्यक्ष है एक २ आदमी में फैली है और सब लोग उस का फायदा उठा रहे हैं। तिस में भी बीती हुई उन्नीसवीं शताब्दी तो मानो वैज्ञानिक उन्नति की सीमा हो गई। दर्शन या विज्ञान का जो नया सिद्धान्त या उसूल ईजाद होता है वह अटल रहता है जिस भूमि में उस का आविर्भाव हुआ वहां से चाहो उस का लोप हो जाय पर एक जगह से उखाड़ दूसरे ठौर लगाये गये नये पौधों की भांत दूसरी भूमि में उस का फैलाव बड़े विस्तार से होता जाता है। रेखा गणित के परमाचार्य युक्लैदिस यूनान या मिसिर देश में न जानिये कब हुये किन्तु उन के निकाले हुये युक्लिद् के सिद्धान्त अब तक कायम हैं और उन सिद्धान्तों को मूल में रख गणित के त्रिकोण मिती आदि नजानिये कितने ग्रन्थ और भी बने। इसी तरह किसी नये सिद्धान्त का आविष्कार आविष्कर्ता पहिले बीज बोने के समान करता है पीछे विचार शील विद्वान् उस बीज को अंकुरित और पल्लवित करते हुये संसार का बड़ा उपकार साधन करते हैं। किन्तु सम्पूर्ण करतूत उस विषय की उस प्रथमाविष्कार कर्ता की रहती है इस लिये विशेष धन्य बाद का पात्र वही होता है। बहुधा पहिले पहिल किसी नये सिद्धान्त का आविष्कार करने वाला लोगों में हंसा जाता है; सबलोग उस की ज़ीट उड़ाते हैं; उस से घिनाते हैं; यहां तक कि कभी २ ऐसा मनुष्य पीटा गया है कहां तक कहें लोगों ने उसे मार डाला है। पर वह अपने अटल सिद्धान्त से न हट अन्त को कृत कार्य होता है और उस के आविष्कार से संसार का बड़ा उपकार होता है। न्यूटन गेलिलियो जेम्सवाट आर्किमिडीज़ आदि कितने ऐसे हो गये हैं जिन के आविष्कार

से संसार का कायापलट गया दुनिया और की और ही हो गई। यद्यपि पुराने लोग यही गीत गा रहे हैं कि पहिले की अपेक्षा अब घटाव और तनज्जुली है। हिन्दुस्तान ऐसे पुराने जर्जरित देश की जैसी गिरी दशा है उसका खयाल कर जी में आता है कदाचित् उनका यह कहना सही हो पर इस समय के नये २ विद्वानों के नये २ आविष्कार और कल्पना पर ध्यान जमाओ तो यही बात पुष्ट पड़ती है कि साधारण रीति पर ज्ञान का भण्डार बढ़ताही जा रहा है और नहीं मालूम किस सीमा तक बढ़ेगा॥

जब यह बात सिद्ध है कि दुनिया रोज़ २ तरक्की कर रही है तो जैसा डारविन ने विकाश सिद्धान्त निकाला है वैसाही कोई दूसरा बड़ा वैज्ञानिक और पैदा हो वह कोई दूसरी "थिओरी" निकाले जिस से यह सिद्धान्त कट जाय या और अधिक पुष्ट पड़ जाय पर यह संसार एक ढङ्ग पर ढलकता हुआ जो उन्नति कर रहा है उस में त्रुटि न होगी और आशा है कि मनुष्य की ज्ञान शक्ति बढ़ती ही जायगी। चिरस्थायी हो जाने की सुगम उपाय छापा न रहने से बहुत से पुराने आविष्कार विलुप्त प्राय हो गये हैं पर इस से हमारा तरक्की वाला सिद्धान्त कट नहीं सक्ता यह वैसा ही हुआ कि जैसा कोई दस सीढ़ी वाले मकान पर चढ़ता हुआ ५ सीढ़ी डाकने पर कोई ऐसा रूकाव मिला कि वहां उसे चिरकाल तक ठहरना पड़ा या मान लो एक सीढ़ी नीचे गिर गया पर वहां वह सम्हल कर फिर ऊपर चढ़ने का उद्योग करने लगा। हिन्दुस्तान की इस समय ठीक ऐसी ही दशा है। तालीम का असर लोगों पर इतना व्यापा है कि अपना गिरना उन्हे मालूम होने लगा है और अपने पुराने स्थान पर पहुंचने को तन मन से उत्सुक हो रहे हैं। अब बहुधा सामाजिक विवाद इस बात का है कि पुराने क्रम के अनुसार उस पद पर पहुंचना सुगम और अच्छा होगा कि नये ढङ्ग और नये आविष्कारों के द्वारा? जो हो पर यह सर्वथा सिद्ध है कि दुनिया दिन २ तरक्की कर रही है।

इस तरक्की की दौड़ में निःसन्देह हम और २ देश तथा जाति से पीछे पड़े रहते हैं और इतना पीछे रह जाते हैं जो तरक्की न करने की भांत है। उसका आर्थिक फाइदा और लोग खातिर खाह उठा लेते हैं तब हमारा ध्यान उस ओर जाता है पर मसल है "देर आये दुरुस्त आये" तरक्की की दौड़ में पीछे तो हैं किन्तु जहां तक बढ़े हैं उस से अब पीछे न हटैंगे यह निश्चय है। क्या अचरज एक दिन ऐसा आवै कि इन दिनों की परम सभ्य जाति के समकक्ष हो केवल झूठे उपाधि वाले नहीं बरन भारत के सच्चे चमकीले तारे हो हम भी उन्नति के आकाश मण्डल मे चमक उठैं ॥

--:०:--

॥ चार ॥

काशी के भारतेन्दु तथा प्रदीप में एक और दो की गाथा देख जगत् के चतुर्भुजी रूप नारायण शर्म्मा मुस्तफापूर ज़िलह पटना ने भारतजीवन में तीन पांच कर तीन की मर्यादा केवल तीन ही जन्म की रक्खा है अब हम चार की महिमा गाते हैं। सावन से भादों दुबला नहीं है इस चार की गाथा चारयुग (सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग) तक बराबर चतुर्मुख ब्रह्मा अपने चार मुख से गाने लगैं तो अन्त में हार मान उन को भी लाचार हो जाना पड़ेगा चलिये लीजिये इस चार पर विचार करिये।

पहिले इस संसार की चारो दिशाओं तथा चारो उपदिशाओं की ओर ताकिये जहां गणना में चारही चार पाइयेगा। लड़का पैदा हुआ नहीं कि चारो तरफ इस चराचर के भव जाल से छुटकारा पाने का कोई चारा न देख रोने लगता है अथवा माथे की चौखुटी तख्ती में विधिना के ढाई अक्षर पर विचार कर सन्ना जाता है। इस चार के बटवारे में ब्राह्मण ही नें चारो वर्णों में अपना वर्ण श्रेष्ठ रक्खा; जिसे देख नीचे

के वर्ण वाले हसद् से जले जाते हैं। चार वरण के साथ २ चार आश्रम भी पीछे लगे हुये हैं। चार वेद में नहीं मालूम कितने चार २ मंत्र के सूक्त घुसे हुये हैं। चतुष्पदों में सिंह को नारायण ने अपनाही रूपमाना है फिर चार पैर वालों में गौ की रक्षा करना धर्म्म की चार टांगों में मुख्य एक टांग मानना चाहिये॥

दशरथ जी के चारो पुत्रों को देख शत्रु की चतुरङ्गिणी सेना थर कर चारो कोने दबक जाती थी। दुनियां में चार ही मज़हब की अधिक ख्याति है:--हिन्दू; मुसलमान; बौद्ध और इसाई। मनु महाराज ने पातको मे चार पातक को महापातक कहा है:—यथा। ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः और इन चारों का सरताज वह है जो इन चारो में से किसी एक का साथ करै। आजकल पुराने ख्याल वालों में जो चारो धाम क्या हो आये मानो चारो अपवर्ग धर्म्म (अर्थ) काम और मोक्ष को पागये हों चाहो कर्म्म उन के कैसे ही निकृष्ट क्यों न हों। University में लड़कों के कोर्स में चारही Subject का बोझ लाद दिया जाता है। महीने में चार हफ़्ते से ज़ादा भला एक दिन भी तो हो ले। एक वर्ष अपने चार तिहाई में बंटा हुआ है। भोजन में चारही वस्तु अधिक तर रक्खी गई है दाल भात रोटी और तरकारी। वैष्णव लोगों ने भगवान् का चतुर्व्यूह रूप माना है यथा वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न और अनिरुद्ध नीति में भी चार मुख्य मानी गई हैं जैसे राजनीति, धर्मनीति, समाज नीति, चौथी अनीति। राजा का राजनीति में मुख्य काम चार(दूत) से ही निकलता है राजा इसी से चार चक्षु कहे जाते हैं। मनुष्य अपनी भलाई चाहै तो सदाचार, अनाचार, दुराचार, अत्याचार

आचार के इन चारों में से सदाचार को ग्रहण करै और दुराचार अनाचार अत्याचार को कोढ़ समान अपने से अलग करै किसी नीतिज्ञ ने कहा है:--

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रमुत्व मविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्॥

चतुर्भुज विष्णु के चार भुजाओं में चार शस्त्र हैं शंख चक्र गदा पद्म विष्णु के चारोयुगों में चार रूप बदलते हैं। और भी महाराज के रथ के चार घोड़े प्रसिद्ध हैं शैब्य, सुग्रीव मेघपुष्प बलाहक़ इस संसार में भी ऐसा ही कोई भाग्यशाली होता है जिस को चौकड़ी की सवारी मिलती है। सृष्टि कर्ता ने सृष्टि भी चार ही प्रकार की रचा है अण्डज, स्वेदज, पिण्डज, उद्भिज्ज, सायन्स वालों ने हवा में चार बस्तु को मुख्य माना है Oxygen, Mitrogen, Hydrogen andCarbonic acidgas उर्दू के किस्से में चहार दरवेश किस ने न पढ़ा होगा इस प्रयाग में बड़े २ दफ़्तरों की चार कोने में चार ईमारतों High Court, Secreteriate, Accountant and Board. को देख किस नौकरी ख्वांहां का जी न ललकता होगा कि मुझे भी यहां की नौकरी मिले। कांमशास्त्र में स्त्रियां भी चार ही प्रकार की मानी गई हैं पद्मिनी शंखिनी चित्रिणी हस्तिनी इन ४ स्त्रियों के जोड़ के नर भी ४ ही हैं। गीता में ४ ही को ईश्वर के भजन का अधिकारी माना है। "आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थीज्ञानीच भारतवर्षभ" इस चार में उकार की मात्रा जोड़ दो तो चारू (मन भावन) बन जाता है। अस्तु इस चार की गीत बहुत गा चुके इस टिमटिमाते प्रदीप की ज्योति को भी जुग जुगाते ४ सते २८ वर्ष हो गये। जितनाही सोचते जाइये छितराये हुये चिड़ियों के चारे की भांत चार ही का विस्तार पाते जाओगे कहां तक कहे याद रहे इस क्षणिक नश्वर संसार से कूच करने पर भी ४ के कन्धे पर चढ़ के जाना होगा। M. P.

:o:

फूल में कांटा

लश्कर ग्वालियर निवासी बाबू रामदास वैश्य रचित। इस उपन्यास में बाल्य विवाह आदि समाज में प्रचलित बुराइयों का अच्छा चित्र खींचा गया है जिस से यह पढ़ने मे रोचक हो गया है। उपन्यास यह अवश्य शिक्षा प्रद है और संग्रह करने योग्य है मूल्य ॥=) है।

मिलने का पता रामदास जी वैश्य लश्कर ग्वालियर।

—:o:—

सौ अजान एक सुजान।

यह एक निराले ढङ्ग की प्रबन्ध कल्पना प्रदीप की पुरानी जिल्दों से छांट अलग छपाई गई है। जिस के सम्बन्ध में साप्ताहिक तथा मासिक सबी सामयिक पत्रों ने अपनी २ अनुमति प्रगट की है और सबों ने इस की प्रशंसा की है। जिसे हम यथा स्थान और यथा-वकाश प्रदीप में प्रकाशित करैंगे। हिन्दी पढ़ने वालों को यह अवश्य मेव बहुत रोचक है। मूल्य मैं डाक व्यय ॥) प्रदीप के ग्राहक नागरी प्रचारिणी सभा के मेम्बर तथा असमर्थ विद्यार्थियों को यह पुस्तक डाक व्यय सहित ।=) में मिलैगी। मिलने का पता-

मेनेजर हिन्दी प्रदीप प्रयाग

—:o:—

बालों को स्याह करने का सुगन्धित साबुन।

इस साबुन के मलते ही सुफेद बाल मानिन्द असल के स्याह हो जाते हैं। एक टिकिया साबुन की मुद्दतों के लिये काफी है। मूल्य प्रति टिकिया १) रुपैया।

इस ने दुनियां के ख़िजाबों (कल्फों) की कदर घटा दी।

केवल पहले ही ३ टिकिया के १०० ग्राहकों को टाइमपीस गेरेंटी ३ साल मुफ़्त मिलेगी॥ मिलने का पताः—

मेनेजर हेअर डाई सोप कम्पनी—लाहौर

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है।

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट है आनन्द भरै।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै॥

जि० २८ सं० १० } प्रयाग { अक्टबर सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥≡)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द की जिल्द मै पोस्टेज ३)

——:००:——

जि० २८ सं० १० } प्रयाग { अक्टूबर सन् १९०६ ई०

प्रतिभा ।

प्रतिभा बुद्धि का वह गुण और मनुष्य में वह शक्ति है जो स्वाभाविक होती है और अभ्यास से अधिक २ बढ़ती जाती है । काव्य रचना इस की कसौटी है। यह कहना कि बिना प्रतिभा के कवि हो ही गा नहीं सर्वथा सुसङ्गत है । ऐसा मनुष्य अभ्यास के बल दो चार पद गढ़ लेगा किन्तु प्रतिभा न होने से वह निरी गढ़न्त रहेगी रस उस में कहीं से न टपकैगा । "काव्यं रसात्मकं वाक्यम्" मम्मट भट्ट का काव्य का यह लक्षण न उस गढ़न्त में सुघटित होगा । इस प्रतिभा में भी तारतम्य है । कालिदास में जैसी प्रतिभा थी वैसी भवभूति भारवि और श्रीहर्ष में न थी; सूर तुलसी बिहारी में जो प्रतिभा रही वह केशव मतिराम भूषण और पद्माकर में न थी । शेक्सपियर और मिलटन के

समान प्रतिभा अंगरेज़ी के और कवियों में कहां है। आधुनिक कवि टेनिसन की रचना चाहो अधिक गम्भीर और शिक्षा प्रद Instructive हो पर वह रस इन के काव्य में नहीं टपकता जैसा शेक्सपियर की रचना में है। अस्तु प्रत्येक कवि की प्रतिभा का तारतम्य एक जुदा विषय है जिसे हम कभी अलग दिखावेंगे आज केवल प्रतिभा का स्वरूप मात्र दिखलाने का हमारा प्रयत्न है। फिर भी इतना यहां सूचित किये देते हैं कि प्रतिभा का प्रसादगुण के साथ बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। कालिदास की प्रतिभा जो सब से अधिक मानी गई सो इसी लिये कि उन की रचना प्रसाद गुण पूर्ण है। जो दाखरस के तुल्य है कि स्वाद में मिसरी से अधिक मीठा मुख के किसी अवयव को ज़रा भी क्लेश न हो जीभ पर रक्खा नहीं कि घूंटगये। और कवियों की रचना में चाहो रस हो भी तो पद और भाव इतने क्लिष्ट कि बिना थोड़ी देर सोचने के रस नहीं मिलता॥

प्रतिभा केवल कबिता ही में नहीं वरन कितनी बातें हैं जिस में यह अपना दखल जमाये हुये है। यह प्रतिभा ही है कि यहां के अपढ़ लुहार बढ़ई ऐसी २ कल और पुरज़े बना देते हैं कि उनकी बुद्धि कौशल पर बिलाइत के बड़े २ इंजिनियर और आरटिस्ट दंग हो जाते हैं। यहां के प्रसिद्ध चित्रकार रविवर्मा में चित्रकारी की अद्भुत शक्ति प्रतिभाही का परिणाम है। रोम के प्रसिद्ध विजयी कई एक सीज़र्स, सिसिरो हानिवाल, नेपोलियन बोनापार्ट, रणजीतसिंह आदि सब प्रतिभा शाली थे और उन की प्रतिभा युद्ध कौशल की थी। बुद्ध देव शङ्कर रामानुज गुरु नानक स्वामी दयानन्द ईसा और महम्मद आदि सब प्रतिभा वाले महा पुरुष थे और इन की प्रतिभा नया २ धर्म चलाने की थी। बहुधा ऐसा भी देखा जाता है कि यह प्रतिभा बराबर वंश परम्परा तक आती गई है। हमारे यहां जो एक २ पेशेवालों की अलग २ एक २ जाति कायम कर दी गई है उसका यही हेतु है कि उस जाति के

मनुष्य में उस पेशे की प्रतिभा बराबर दौड़ती आती है। किसी २ में पूर्ण रीति से झलक उठती है। और उतने अंश में यत्किंचित् विच्छित्ति विशेष प्रतिभा ही कही जायगी। मनुष्य में प्रतिभा का होना पुनर्जन्म का बड़ा पक्का सबूत है। क्या कारण कि एकही शिक्षक दो बालकों को पढ़ाता है एक को प्रतिभा विशेष रहने से वह बात जो गुरु बतलाता जल्द आती है और उस विद्या में वह विशेष चमकता है। दूसरे को गुरु का बतलाना आताही नहीं आया भी तो देर में और अधिक परिश्रम के उपरान्त। तो निश्चय हुआ कि एक को पूर्व संस्कार जो अब प्रतिभा के नाम से बदल गया है स्वच्छ और विमल था दूसरे का मलिन था इसी से प्रतिभा उसमें न आई। "अल्पायासं महत्फलम्" परिश्रम थोड़ा फल बहुत अधिक यह प्रतिभा ही में पाया जाता है। छात्र सन्सद् में बहुत ऐसे पाये जाते हैं जो थोड़े परिश्रम में बड़े दार्शनिक पण्डित और कवि हो गये। वही कितने घोख २ कर थक जाते हैं पर अन्तःपात या बोध उन्हे यथावत् नहीं होता। गीता में भगवद् विभूति को गिनाते २ भगवान् ने कहा। हे अर्जुन अब हम कहां तक तुम से अपनी विभूति गिनाते रहैं जिस मनुष्य में कोई बात असाधारण और लोकोत्तर पाओ उसे भगवद् विभूति ही मानो। यह लोकोत्तर चमत्कार प्रतिभा ही है जिसे कृष्ण भगवान् ने अपनी विभूति कहा है। धन्य हैं वे जिन में किसी तरह की प्रतिभा है सफल जन्म उन्ही का है॥

--:0:--

सुशिक्षितों का कर्त्तव्य।

हमने जुलाई के नंबर में शिष्य की परख शीर्षक एक लेख लिखा था आज यह दिखाते हैं कि शिष्य का कर्त्तव्य क्या है और किस तरह यह कर्त्तव्य बुद्धि आवै। इस समय स्कूल और कालिजों में जो शिक्षा दी जाती है उस में कहां तक इसका अंकुर है। उस लेख में हमने यह भी दिखलाया है कि उस समय छात्रों में कैसी दृढ़ गुरु भक्ति गुरु

सेवा शान्ति और सहन शीलता थी। विद्या पढ़ाने के अतिरिक्त गुरू अपने शिष्य को यह भी बतलाता था कि चरित्र क्या है ? चरित्र पालन क्या है ? और वह कैसे आ सक्ता है। न केवल बतलाता ही था वरन उसका अभ्यास उन से कराता था। जिस का परिणाम यही होता था कि जब वह स्नातक अर्थात् पूर्ण विद्वान् हो अपना ब्रह्मचर्य समाप्त कर आश्रम से लौट समाज में आता था तो अत्यन्त स्वाधीन चित्त, तेजस्वी, और अपने कर्त्तव्य को पहचानने वाला होता था। गुरु भी ज्ञान संपन्न निस्पृह परोपकारी और निष्कपट होते थे बड़े २ चक्रवर्ती जब उनके राज काज में कोई कठिनाई पड़ती थी तो इन्ही से उस कठिनाई को हल करने की सलाह पूछते थे। अब इस समय विद्या तो निःसन्देह पढ़ाई जाती है पर चरित्र की रक्षा का ध्यान जब गुरु में नहीं है तब शिष्य में क्यों होने लगा। अङ्गरेज़ी पढ़ने वालों के चित्त में स्वाधीनता का अंकुर जमता है पर वह अंकुर तभी तक जमा रहता है जब तक अपनी शिक्षा समाप्त कर नोन तेल लकड़ी की फिकिर में हम नहीं फंसे। अस्तु यह दोष तो हमारी घिनौनी समाज का है शिक्षा प्रणाली ने क्या किया ? हां यह सच है किन्तु तब की शिक्षा प्रणाली निःस्वार्थ थी अब के समान उसका क्रय नहीं किया जाता था; गुरू लोग बिना निज के स्वार्थ के शिष्य को पढ़ाते थे इसी से शिष्य भी निष्कपट और सच्चे जी से गुरु की भक्ति करता था। अब शिक्षा का क्रय किया जाता है जिस में ऐसा स्वार्थ आ समाया है कि गुरु शिष्य दोनों में सच्ची सहानुभूति होती ही नहीं। न वह तेजस्विता या जोश और स्वाधीनता उनके चित्त में स्थान पाती है जैसी सुशिक्षित में होनी चाहिये। इधर समाज के अनेक बंधन से हम जकड़े हुये हैं उधर हमारी शिक्षा में इस बात की बड़ी कोशिश शिक्षा विभाग के अधिकारियों की रहती है कि इनमें कहीं पर किसी अंश में स्वाधीनता का बीज न जमने पावे। परिणाम में

यह शिक्षा केवल पेट पालने मात्र के लिये रहती है। पढ़ लिख ऊंची तनखाह की कोई अच्छी नौकरी मिल जाना ही उत्तम शिक्षा का जहां फल समझा गया है वहां हमारा कर्तव्य क्या है इसकी चर्चा ही चलाना व्यर्थ है। देश अपने उद्धार के लिये इन्हीं सुशिक्षित नव युवकों का मुह ताक रहा है। कितने का यह मत और समझौता है कि पढ़ लिख सुशिक्षित हो हम अपने घराने की बात और प्रतिष्ठा बनाये रहैं मानो अपने यावत् कर्तव्य के छोर तक पहुंच गये। किन्तु जो भाव उन को केवल अपने घराने की उन्नति का है वही जो समस्त भारत के साथ हो जाय और उस के खोये हुये गौरव के पुनः संस्थापन की ओर झुक जाय तो कर्त्तव्य बुद्धि का प्रादुर्भाव माना जायगा। जिस के लिये शिक्षा का इस समय का क्रय विक्रय का क्रम बड़ा बाधक है। जब स्कूल में लड़के रहते हैं तभी से स्वार्थ संपादन Self iuterest की बुद्धि दृढ़ होती जाती है। इस लिये कि हमारी तालीम में इतना रुपया ख़र्च हुआ है तो उसका बदला हम अपने घर वालों को तभी चुका सकैंगे जब नौकर हो रुपया पैदा कर मा बाप का हाथ गरम कर सकैंगे। केवल इतनाही इसका फल है तो कर्तव्य क्या है केवल दांत किट्टन मात्र रहा। यही कारण है कि इस समय देश के एक छोर से दूसरे तक तालीम की धारा बह निकलने पर भी सैकड़ा पीछे ५ में भी कर्तव्य बुद्धि नहीं आती और न ऐसी शिक्षा सुशिक्षा कही जा सक्ती है॥

--:0:--

प्राचीन ग्रन्थकार पहले के आगे से।

भानु दत्त मिश्र॥

'रस मञ्जरी' नामक ग्रन्थ भानु मिश्र कृत छप गया है जिस में कई एक श्लोक और २ ग्रन्थकार के भी उद्धृत देखने में आते हैं

वे ग्रंथ अमरु शतक, शिशुपाल बध और बिकट नितम्बा आदि के हैं। अमरु, माघ और विकट नितम्बा आदि सब प्राचीन कवि हैं। अदिव्य नायक और अदिव्या नायिका का उदाहरण देते समय भानुदत्त ने माधव और मालती नाम लिखे हैं जिस से विदित होता है कि भवभूति का मालती माधव उन के समय में प्रचलित था। रस मञ्जरी के अन्त में भानुदत्त ने अपना परिचय यों दिया है ॥

इनके पिता का नाम गणेश्वर था। इनकी निवास भूमि मिथिला (तिरहुत) थी॥ रस मञ्जरी के अतिरिक्त और भी कई एक ग्रन्थ इनके बनाये हैं जिन के नाम कुमार भार्गवीय चम्पू, रस तरङ्गिणी और गीत गौरीपति काव्य हैं।

भानुदत्त के रस मञ्जरी रचने के विषय में एक दन्त कथा सुनने में आती है वह यह है।

पण्डित भानुदत्त अपने पुत्र का विवाह करा के भी उसे विद्याध्ययन ही कराते जाते थे वह साधु पुत्र नहीं जानता था कि पत्नी के साथ मेरा सांसारिक कर्त्तव्य क्या है। वह केवल शास्त्रीय विचार में दत्त चित्त था। उसकी स्त्री तरुणी हो आई थी। किसी दिन वह स्त्री गृहाङ्गण में गृहस्थी का धन्धा कर रही थी कि एक बकरा उसके पीठ पर पांव धर के खड़ा हो गया। भानुदत्त की पतोहू ने उस समय परिहास में कुछ बचन कहे जिन्हें कवि आनन्द घन ने यों लिखा है।

जैहै सबै सुधि भूलि तुम्हें फिर भूलि न मोतन भूरि चितै है।
एक को आंक बनावत मेंटत पोथिय कांख लिये दिन जैहै॥
सांची हौ भाषति मोहि कका की सौं पीतम की गति तेरीहू ह्वै है।
मोसें कहा अठिलात अजासुत कैहौं बबाजू सें तोहिं सिखै हैं॥

पं० भानुदत्त उस समय वहीं पर थे किन्तु पतोहू को यह बात विदित न थी। निदान पण्डित जी ने रस मञ्जरी नाम पुस्तक बना के

पुत्र को पढ़ाया। तब पुत्र ने संसार को जाना और अपनी पत्नी के मनोरथ को पूर्ण किया।

जनार्दनभट्ट ने निज रचित ग्रन्थ में रस मञ्जरी का उल्लेख किया है जिस से स्पष्ट है कि उनके समय में भानुदत्त प्रसिद्ध हो चुके थे। कवि आनन्दघन भी प्रायः १८ वीं शताब्दी के हैं अतएव भानुदत्त इन लोगों की अपेक्षा प्राचीन और माघ आदि की अपेक्षा नवीन हैं। इनका समय ख्रीष्टीय १४ वीं शताब्दी का पूर्व भाग मान लेना सर्वथा युक्ति से असङ्गत नहीं है। इन के दो ग्रन्थ रस मञ्जरी और रस तरङ्गिणी अद्भुत चमत्कारी दरसाते हैं उसमें भी रस तरङ्गिणी तो काव्य प्रकाश आदि के टक्कर का ग्रन्थ है। भानुदत्त ने इन दो ग्रन्थों को रच संस्कृत साहित्य के भण्डार में एक नये प्रकार का चमत्कार प्रगट कर दिया। इसका यथावत् ज्ञान और अनुभाव विभाव आदि की बारीकियों का यथास्थित परिचय एक शास्त्र कर दिया है। ऐसा ही नायिका नायक का निरूपण रस मञ्जरी में जैसा है उस से प्रौढ़ा मध्या धीरा ज्ञात यौवना अज्ञात यौवना खण्डिता मुग्धा बासक सज्जा आदि के भेद से नायिका भेद भी एक जुदा शास्त्र हो गया है कोकिल कण्ठ जय देव का गीत गोविन्द पढ़ने से जिस की बारीकियां प्रगट होती हैं॥

:o:

भाव मिश्र।

ये महाशय एक प्रसिद्ध वैद्यक ग्रंथ के रचयिता हैं। उस ग्रन्थ का नाम भाव प्रकाश है। इस ग्रंथ पर इन्हीं महाशय ने टीका भी की है। भाव मिश्र के समय और देश के विषय में मथुरा निवासी श्रीकृष्ण लाल ने अपनी छपाई चरक संहिता की भूमिका में लिखा है। "यह सन् १५५० ई० में मध्य प्रदेश में उत्पन्न हुआ था"। भाव मिश्र के पिता का नाम श्री मल्लटकन मिश्र था। भाव मिश्र का भाव प्रकाश नाम ग्रन्थ बहुत उपयोगी है और वैद्यों के बीच में उस का सविशेष आदर है।

कृष्णलाल भी आगे चल के लिखते हैं। "भाव प्रकाश में पृथक् २ विषयों की छांट करके सब विषय एक जगह इकट्ठे किये गये हैं जो विषय जहां चाहिये वहां ही पूर्ण रीति से लिख दिया है उस विषय के लिये अन्यत्र दौड़ने का काम नहीं पड़ता है। भाव मिश्र के समय में यूरोप के लोग यहां आने जाने लग गये थे इस से इन के ग्रन्थ में फरङ्ग रोग का भी वर्णन किया गया है। भावमिश्र ने भी अपने भाव प्रकाश में निघण्टु लिखा है यही हरीतक्यादि निघण्टु कहाता है। इस में द्रव्यों के नामान्तर और गुण लिखे हैं। इस ग्रन्थकार के समय में मुसल्मानों का पूर्ण प्रताप विद्यमान था और हकीमों की चिकित्सा प्रचलित थी इस से उन के द्रव्य भी जैसे खुरासानी अजवायन खुरासानी बच आदि मिला दिये गये हैं" ॥

——:०:——

भास ॥

ये महाशय एक अत्यन्त प्राचीन कवि जान पड़ते हैं क्योंकि मालविकाग्निमित्र की प्रस्तावना में कालिदास इन का नामोल्लेखन कर प्रगट कर दिया कि उस समय इनका यश संसार में व्याप्त था। इसी वाक्य से यह भी अनुमित होता है कि भास के बनाये ग्रन्थ कालिदास आदि के समय में प्रचलित थे। बाण ने भी हर्षचरित के प्रारम्भ में भास का उल्लेख किया है यथा ॥

सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः ।
सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव ॥

राज शेखर ने भी अपने ग्रंथ में जो प्राचीन कवियों की नामावली दी है उस में भास का नाम सब से पहिले है। भास के रचित ग्रन्थों के अब नाम तक नहीं मिलते पर कुछ श्लोक शार्ङ्गधर पद्धति में उन के रचे उठाये गये हैं इन्हें पढ़ने से भास की कविता शक्ति का परिचय मिलता है यथा।

कपाले मार्जारः पय इति करांल्लेढि शशिन ।
स्तरुच्छिद्रप्रोतान्बिसमिति करी सङ्कलयति ॥
रतान्ते तल्पस्थान्हरति वनिताप्यंशुकमिति ।
प्रभामत्तश्चन्द्रो जगदिदमहो विभ्रमयति ॥
यदपिविबुधैः सिन्धोरन्तः कथञ्चिदुपार्जितं ।
तदपि सकलं चारुस्त्रीणांमुखेषु विलोक्यते ॥
सुरसुमनसः श्वासामोदे शशीच कपोलयो ।
रमृत मधरे तिर्यग्भूते विषंच विलोचने ॥

प्रसन्न राघव में कौण्डिन्य जयदेव ने भी इन का नाम दिया है ।
"भासोहासःकविकुलगुरूः कालिदासो विलासः"

भास्कराचार्य ।

ये एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे । उज्जैन के ज्योतिषियों ने हण्टर साहिब को वहां के प्राचीन ज्योतिषियों के समय का एक सूची पत्र दिया था उस में भास्कर का भी नाम आया है और उन का समय १०७२ साल अर्थात् सन् ९९४ ई० लिखा है । निदास स्त्रीष्टीय १० वीं शताब्दी इनका समय निर्णीत होता है । इनका रचित सिद्धान्त शिरो मणि नाम का ग्रंथ सविशेष प्रसिद्ध है और भी कई एक ग्रन्थ भास्कर के बनाये हैं यथा लीलावती बीज गणिताध्याय इत्यादि ।

पण्डित सुधाकर जी ने निज रचित गणकतरङ्गिणी में भास्कर का जन्म स्थान सह्य पर्वत का बीजापुर नाम ग्राम बतलाया है । ये शांडि-ल्य गोत्रोत्पन्न हैं इन के पिता का नाम महेश्वर था ऐसा भास्कर ने निज रचित बीज गणित मे लिखा भी है । कुछ लोग भास्कर की पत्नी का नाम लीलावती बतलाते हैं । किसी २ के मत में भास्कर की कन्या का नाम लीलावती था । इन का जन्म सन् ९५८ ई० में हुआ था ॥

--:o:--

भोजराज (१)।

हरिमोहन प्रामाणिक के कथनानुसार ये वृद्ध भोजराज हैं। ये कर्णाट देश के राजा थे और प्रसिद्ध प्रमरवंशी विक्रमादित्य के थोड़े ही पीछे इनका उदय हुआ था। कई एक संस्कृत के प्रसिद्ध कवि इनकी सभा में थे जिन में वररुचि, सुबन्धु, बाण, मयूर, कबिराज; कालिदास माघ, आदि भी हैं पर इस बात की सत्यता सिद्ध करने में बड़ी बाधाएं पड़ती हैं। यद्यपि वररुचि, सुबन्धु, कालिदास आदि विक्रम के पीछे वृद्ध भोजराज की सभा में उपस्थित हो सकते हैं पर बाण, मयूर, कबिराज और माघ का इनकी सभा में उपस्थित होना नितान्त असम्भव है। कालिदास ने महापद्य नाम स्वरचित पुस्तक में वृद्ध भोजराज की सभा में अपने प्रवेश का वर्णन लिखा है और उसी से विदित होता है कि ये वृद्ध भोजराज कर्णाट देश के राजा थे। ये अन्ध्र वंशी राजा और प्रमरवंशी राजपूत थे। विक्रमादित्य के लगभग ५० वर्ष पीछे इनका उदय हुआ। अतएव इनका समय ख्रीष्टीय छठी शताब्दी का अन्तिम भाग स्वीकार किया जा सकता है। राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द इतिहास तिमिर नाशक के तीसरे भाग में लिखते हैं। प्रसिद्ध धारापति भोज के अतिरिक्त, भोज नाम के दो राजा और भी हुए हैं एक सन् ५६७ ई० और दूसरा सन् ६६५ ई० में। निदान यह अनुमान चित्त में धसता है कि ५६७ ई० वाले भोजराज कर्णाटक के वृद्ध भोजराज ही होंगे। ये महाराज गुणी जनो का बड़ा आदर करते थे और इनके रचित ग्रन्थ का नाम चम्पू रामायण है।

भोजराज (२)।

ये महाशय मालवाधीश प्रसिद्ध भोजराज हैं इनकी राजधानी धारा नगरी थी जो आज कल मालवा की धार नामक छोटी रियासत में गिनी जाती है। भलाई सुशासन और बिद्वानों की कदर करने में बहुधा लोग भोज और विक्रम की उपमा देते हैं; उपमा के योग्य भोज यही हैं। भारत में विक्रम के अनन्तर इन्ही भोजराज की

प्रसिद्धि है। ये परम् विद्वान् और गुण गृहीता थे। इनके रचित ग्रन्थों के नाम सरस्वती कण्ठाभरण रसकौमुदी और युक्ति कल्पनाद्रुम आदि हैं। सरस्वतीकंठाभरण में विशाख दत्त विरचित मुद्राराक्षस से दो श्लोक उद्धृत देख पड़ते हैं जिस से भोज विशाख दत्त से पिछले सिद्ध होते हैं। मम्मट ने काव्य प्रकाश में एक श्लोक भोजराज के दान की प्रशंसा का उठाया है यथा।

मुक्ताःकेलिविसूत्र हारगलिता सम्मार्जनीभिर्हृताः।
प्रातः प्राङ्गणसीम्निमन्थरचलद्बालांघ्रिलाक्षारुणाः॥
दूराद्दाड़िमबीज शङ्कितधियः कर्षन्ति केली शुकाः।
यद्विद्वद्भवनेषु भोजनृपतेस्तत्त्याग लीलायितम्॥

इस श्लोक की टीका में वामनाचार्य झलकीकर लिखते हैं कि इसी उदाहरण द्वारा सूचित होता है कि सरस्वतीकंठाभरण के रचने हारे भोजराज मम्मट भट्ट की अपेक्षा अधिक प्राचीन जन हैं। यह बात सर्वथा युक्ति सङ्गत जान पड़ती है।

भोज के पिता का नाम सिन्धुराज और पितामह का नाम वाक्पति श्रीराजदेव था ऐसा प्राचीन माला के एक लेख से जो संवत् १०७८ अर्थात् सन् १०२१ ई० में लिखा गया प्रकट होता है! इन के पितृव्य का नाम मुञ्ज था। कथा प्रचलित है कि मुञ्ज ने किस प्रकार राज्यासन गृहण करके ज्योतिषियों से भोज के भावी प्रताप का वर्णन सुना और गुप्तरीति से उन के मरवा डालने की चेष्टा की। पर भोज के प्रान बच गये। मुञ्ज को अपने विचार पर पछतावा हुआ भोज को राज्य सौंप स्वयं बन में जा बसा और तपस्वी हो गया। विद्वज्जनों ने निर्णय किया है कि भोजराज का धारा में राज्य काल सन् ९९६ ई० तक था अर्थात् भोज ख्रीष्टीय ११ वी सदी के पूर्वभाग के व्यक्ति हैं।

राजा शिव प्रसाद भी भोज के विषय में लिखते हैं।

सन् ९९३ ई० में धार के राजा भोज के समय में संस्कृत विद्या ने बहुत उन्नति पायी ! उसका दर्बार संस्कृत के सूर्य का मानो मध्याह्न था एक २ श्लोक के लिये एक २ लाख देता था अपने राज में किसी को भी मूर्ख रखना नही चाहता था। भोज कोई बड़ा राजा न था परन्तु विद्या की क़दर करने से इसने बड़े २ महाराजाधिराजों को मात कर दिया उस का नाम आज तक चला जाता है। सच कहा है ! "कीर्त्तिरवरसंवद्धा स्थिरा भवति भूतले" ॥

--:०:--

मिस्टर मारली और हिन्दुस्तान।

जब तक मिस्टर ब्राडरिक हिन्दुस्तान के सेक्रटरी थे उस समय तक यही जी में बसा था कि भारत के कुदिन कभी दूर न होंगे। उपरान्त यह समाचार मिला कि Balfour बालफर दल सहित ब्राडरिक मंत्रि पद को छोड़ बैठे। कुछ दिन बाद यह ख़बर आई कि अब मारली साहब हिन्दुस्तान के मंत्री हुये हैं। इस खबर के सुनतेही समाचार पत्रों के संपादक और राजनीतिज्ञ परस्पर एक दूसरे को बधाई देने लगे। ऐसा जान पड़ता था कि हिन्दुस्तान के दुर्ग्रह का एक बारगी नाश होने वाला है और मानो जन्म जन्मान्तर के नारकिक अब पुष्पक विमान पर चढ़ २ स्वर्ग जाया चाहते हैं। या यों कहिये कि जैसी दशा दुर्भिक्ष पीड़ितों की उस समय होती है जब एक मूठी भर चावल उनके हाथ लग जाता है। या नदी में उस डूबते हुये मनुष्य की जिसे किनारे पर जमे पेड़ की टेहनी हाथ आ जावे; वैसी ही दशा भारत वासियों की मारली के मंत्रिपदागमन पर हुई थी, परन्तु हा हमारे भाग्य में नैराश्य ही लिख दिया गया है वही मिस्टर मारले जिन्हों ने जब तक इस पद पर न आये थे सदा स्वातंत्र्य का पक्ष किया करते थे

और जिन की प्रतिभा शालिनी लेखनी ने केवल भारत ही के मनुष्यों में क्या वरन समस्त संसार के लोगों में स्वतंत्रता का जोश कितनी बार पैदा कर दिया है; उन से यह कब संभव था कि वे अपनी पुरानी लिखी हुई बातों पर हरताल फेरदेंगे और स्वयं इस कहावत के उदाहरण बनैंगे कि हाथी के दांत दिखाने के और होते हैं और खाने के और-यदि हमारा यह नैराश्य और मारली के सम्बन्ध में यह कटु कथन झूठा है तो हम उन से क्षमा चाहेंगे और यदि मारली साहब अपने कामों से हमारे नैराश्य को झूठा सिद्ध कर दें तो हम से अधिक दूसरा मनुष्य संसार में प्रसन्न न होगा। किन्तु अब तक तो मिस्टर मारली ने अपने कामों से हिन्दुस्तान के लिये कोई ऐसी बात नहीं दिखाया जिस से हमारी वे अभिलाषायें जो उन के आने के समय हुई थीं पूरी होती देख पड़ैं। इन के आने के ६ वर्ष पहिले से हिन्दुस्तान ऐसे २ राजनैतिक कष्ट भोग रहा था कि ब्रिटिश गवर्नमेंट की भलाई चाहने वाले यही कहते थे कि हा जगदीश यह घोर व्यापार कब तक चल सक्ता है। उपरांत जब यह मंत्रिपद पर पूरी तरह नियुक्त हो गये उस समय वंग विच्छेद के सम्बन्ध में कई बार कई सहस्र मनुष्यों ने निवेदन पत्र भेजा किन्तु मारली ने सर्वथा उस की उपेक्षा कर दिया। फुलर साहब के इस्तीफा देने पर ईस्टर्न बङ्गाल की लफटिनेंटी में हेयर साहब के नियत हो जाने के पहिले हमलोगों को पूरी आशा थी कि गुप्ता जो बङ्गाल के सिविलियनों में इस समय सब से सीनियर हैं फुलर के स्थानापन्न किये जांयगे किन्तु मारली साहब को इतना साहस न हुआ कि एक हिन्दुस्तानी को ऐसे ऊंचे पद पर नियत कर देते। तब कैसे सिद्ध हो कि मारली ब्राडरिक के सदृश केवल वाक् चपलता मात्र नहीं रखते। अस्तु अभी लिबरल दल विलाइत में आशा है कई साल तक रहैगा देखैं आगे मारली साहब क्या करतूत कर दिखाते हैं। लिब-रल हों चाहो कनसरबेटिव हों हमारे लिये दोनों एक से हैं जैसे नाग

नाथ वैसे सांप नाथ जहां तक बस चलेगा हिन्दुस्तान को उभड़ने न देंगे। न हमलोग अपनी भावी भालाई के लिये शासकों का मुह जोहना छोड़ अपने निज बल पर काम करने में प्रवृत्त होंगे अस्तु ।

--:०:--

बड़े लाट के कौंसिल की मेंम्बरी ।

हमारे इस प्रान्त हत भाग्य यू० पी० को बङ्गाल और बम्बई के मुकाबिले सदा पीछे हटे रहना ही बदा है तब तो हमारे यहां से जो चुने जाते हैं वे ऐसे ही होते हैं जिन की नज़र के सामने स्वार्थ वासना सदा प्रत्यक्ष नाचा करती है और पबलिक के कार्य का प्ररोह मुरझाया हुआ परोक्ष में पीठ के पीछे पड़ा रहता है । इस बार बड़ी आशा लगाये थे कि कौंसिल में एक ऐसे चुने जांयगे जो सर्व साधारण के कार्य में बराबर दत्त चित्त रहे और अपने अनेक सर्वहित कामों के नमूना बन चुके हैं किन्तु इस नये इलेक्शन में स्वार्थ इतना ज़ोर पकड़ गया और परस्पर की स्पर्धा इतनी बढ़ी कि जिस का अंजाम यही हुआ कि कौंसिली लोगों को डिनर पारटी भर पूर मिलने का सुबीता हो गया । चलो हमारा कुछ फाइदा न हुआ नहीं सही हमारे श्वेताङ्ग महा प्रभु प्रसन्न रहेंगे यही क्या कम है "सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः" यह जुदी बात है कि कौंसिल में ऐसा मनुष्य होना चाहिये जिसे गोखले के समान शुद्ध देश हित की बासना हो और जो अपनी तर्रार तकरीर का लाट साहब के जी में असर पहुंचा सके । जो महाशय हुये हैं वे केवल हां में हां मिलाने में प्रवीण अलबत्ता है देश के दुर्भाग्य ही ऐसे हैं तो क्या बस है ॥

--:०:--

यह दुनिया एक मजलिस है ।

अगर आप किसी मजलिस में जाइये तो देखोगे कि लोग निराली सजधज से सजे बजे मजलिस की रौनक बढ़ा रहे हैं; जिन के मन में यही समाया हुआ है बस इस मजलिस की शोभा हमी से है। ऐसा ही सिरजन

हार उस बड़े खालिक की खिलकत या रचना में यह दुनिया एक मजलिस है। जिस में गूलर के फल में कीड़ों की भांत तरह २ की सूरत शकल या रूप रंग के ऐसे मखलूक भरे पड़े हैं जो अपने २ ढंग और अन्दाज़ में एक दूसरे से बिलकुल निराले हैं और अलग २ अपने को दूसरे के मुकाबिले लासानी और एकता मानते हुये यही तै किये बैठे हैं कि बस सिरजन हार की इस समस्त रचना की रौनक केवल हमी से है। हम न होते तो यह मोहफिल वीरान पड़ी रहती. हम कहते हैं हां सच है "मोहफिल वीरान जहां भांड़ न वाशद्"। चाहो जिस नाम से पुकारो तुम्हें अधिकार है इसे मोहफिल कहो महा सभा कहो या महा मण्डल कहो इसकी शोभा पूर्णतया बस इन्ही से है। इनकी शानो शौकत और तर्ज़ आज दिन अमीरी की नाक है। नहीं साहब आप भूलते हैं नाक क्या बल्कि नाक के भीतर की नाक हैं। फेशन परस्ती का तो बस यहीं से खातिमा है यह न होते तो इन रूपा जीवाओं के रूप की लवनाई का खरीदार कहां मिलता। आप के खड्डे दार बुल्ले में सेर भर मांस हो तो रफू किया जाय तौ भी हसीनों के शुमार में आप अपना औवल दरजा कायम किये हुये हैं। कोटि कन्दर्प लजावन आपही की रूप माधुरी का एक छिट्टा पाय भूलोक में राजा नल अथवा पुरुरवा इत्यादि और स्वर्ग में अश्विनी कुमार रूपवानो की गड़ना में अग्रगण्य हुये। आप की तरह दारी की नकल में मटियाबुर्ज़ वाले नौवाब जन्म भर हैरान परेशान रहे पर पूरी नकल न उतारसके। मालूम होता है भारतमित्र के सुयोग्य संपादक ने हाल में ये चन्दसतरें आपही के सुयश के गान में लिखी हैं क्या। "पद्मिनी घर में है पर कुछ उस से सुख मिलता नहीं। उस के कोरे प्रेम से दिल का कमल खिलता नहीं। नाचना गाना तो क्या करना न जाने वह हंसी–प्रेम दिखलाती है कोने में बिठा कर घर बसी। घर के धन्धे काम सब उस ही से चलते हैं सदा–और जी से चाहती है वह सदा मेरा भला। दुःख पड़ने पर नही उस के बिना निर्वाह है। ऐसी खुश वख्ती में भी

उस की कहीं कुच चाह है" । और भी "चार दिनकी है जवानी घर में है दौलत भरी । जो न सुख लूटा तो फिर किस काम की है ज़िन्दगी । हां उड़े प्याला दमादम रात जाती है चली । गाड़ दो अब सुख के झंडे खोल दो दिल की कली । सूप हो चप हो मटनहो कोरमा हो केकहो आज बोतल बासिनी का खूबही अभिषेक हो । मात ढकढक नादिनी जय शोक ताप निवारिणी । लाल शोभा धारिणी जय जयति भव भय हारिणी । कसवियां गुड़ हैं हमें उस गुड़ की जानो मक्खियां । रात दिन करते हैं भिन २ उनपै लेते चक्खियां । जूतियां भी खा के उन की खिल खिलाते हैं सदा । पर किसी कंगाल को देखें तो हों उस से खफा । साहबों को सब तरह पर खूब रखते हैं प्रसन्न । उन के कामों में न चन्दा दें तो कब पचता है अन्न । झाड़ते लेक्चर हैं लिखते लेख अब बतलाइये । देश हित के वास्ते क्या क्या करें फरमाइये । देश हित कह २ के क्यों फाड़ते नाहक गला । कौन पर हित में फसेगा छोड़ के अपना भला । देश किस का है ? भला किस का करें कतलाइये ? क्या हमारा फाइदा है सोहमे समझाइये ? ढाललें लाओ चिलम ला बर्फ़ पानी प्रान दे । देशहित बक २ के नाहक कौन अपनी जान दे । हां चमेलीबी मधुर होठों को अब फरमाइये । राग नट हम्मीर केदारा ज़रा सुनवाइये । कर चुके करतव्य पूरा हां पड़े तबलेपै थाप । वह पड़े हत्थी कि चिल्लावे पखावज बाब बाप । कामिनो का हो झमकड़ा रंग का दरया बहे । हां चले प्याले पै प्याला जिस को जो भावे कहे । आइये अब सब जहन्नुम को चलें मिल जुल के साथ । नाम हिन्दू का बना रहने में क्या आयेगा हाथ" । आदाब जनाब बाबू साहब जुग जुग जीते रहो बस मजलिस की रौनक आप ही के हाथ है ।

अस्तु आगे चलिये एक छोर से दूसरे तक देख जाइये कतार की कतार यह मजलिस कैसी रौनक अफ़रोज़ है क्या जानिये ये किसी दूसरी दुनिया से आये हों । देर तक गौर करने के बाद पता लगा नहीं, ये

तो हमारे से हाथ पांव नाक कान वाले इसी दुनिया के मखलूक हैं। खालिक ने भूल से हमलोगों के बीच इन्हे भेज दिया। सूरत लंगूर मगर दुम की कसर है। कसर नही दुम शायद निकलवा डाली है। बहुत २ कोशिश की कि हमारा भी गोरों में शुमार किया जाय पर रंग गोरा न कर सके तो तैश में आय दुम कटवा डाली। खैर हैवान से इन सानों में तो दाखिल हुये डारविन का सिद्धांत कि आदमी बन्दर के औलाद हैं सच ठहरा। सभ्यता और शाइस्तगी की उफान के साथ ही साथ दुम आप से आप जब तक झर के गिरै नहीं तब तक दुम कटाय ये लोग विलाइती बनना चाहते हैं क्या करैं काले रंग से बस न चला। हैट पेंट और मुह में फ़लीता रख साहब लोग हो गये मनो साबुन देह में पोत कारखाने खाली कर डाला रंग में तब्दील ज़रा न आई। रिफार्म और मुल्की तरक्क़ी का ठीका ले उतरे थे पर साहब बन जाने की हबस में ऐसा उलझे कि सब भूल स्वार्थ लम्पटता की पुड़िया बन बैठे। गुड मार्निंग सिस्टर सो ग्रैंड सो देखो चौकसी रखना कहीं से यह न ज़ाहिर होने पावे कि हम असल हिन्दुस्थान हैं। नहीं तो चुल्लू भर पानी में मारे शरम के डूब जाना पड़ेगा अपने को हिन्दुस्तानी कहना बड़ी हतक है॥

अस्तु यह दूसरा दल मजलिस को सुशोभित किये हुये है। जैगुपाल लाला जी जै गोपाल। यह माला और लम्बातिलक खूबही टट्टी के आड़ में शिकार है। लम्बा टीका मधुरी बानी.......औवल दरजे के रईसों में हैं लोहे तांबे उतर चुके जब कुछ और करने को न रहा तो भगतई पर आ टूटे। देखने में बड़े साधु और शील के सागर हैं किन्तु समस्त ऐगुण के आगार महापुरुषों में हैं। मेले अथवा मन्दिरों में बेतरह आंख सेकने का रोग लग गया है चलो अच्छा है एक पन्थ दो काज। आंख की आंख सिक गई और दरस परस हो जाने से हिन्दू धरम भी

लिभ गया । धन्य धन्य लगी रहे टक टकी । "लोचन रोम २ प्रतिमांगू एक टक रहैं निमिष नहिं लागैं । पद्धति नई चलाऊं । मैं नानि बहे रूप जो देखैं । तो ऊधो यह जीवन जग में सांच सुफल करि लेखौं । ज्यौं भुवङ्ग केचुरी विसारत फिर नहिं ताहि निहारत । तैसेहि जाय मिले इकटक ह्वै उरते लाज निवारत" नेत्र रूप माधुरी को पीते २ अघाते ही नहीं । स्वर्ग में इन्द्र सहस्राक्ष हैं यहां हमारे ये मेम्बरान मजलिस दो ही नेत्र से टकटकी में सहस्राक्ष को परास्त करते हैं । क्या कहना भगत हीजी तो हैं । "काक चेष्टावकध्यानी" हाथ गो मुखी में मनमुमुखी में अस्तु इन के भक्तिभाव में क्यों बाधा डालें। आगे बढ़ैं– ओ हो यह ठाठ तो इश्क़बाज़ों का है । नई उमङ्ग है इश्क के कूचे में पांव रखना अभी हाल में शुरू किया है । लुखरी सा मुह यह कौन हैं ? ललना ललन । ऐंची तानी बांकी चितवन ये कौन हैं ? ललिता ललित– "तिरछी चितवन पीतम प्यारे मन बैरागी मोरा रे" और ये बाबू बनिता दास हैं । "चुलबुल चालाक चतुर चर पर छिन २ में होत" और ये प्रमदा प्रमत्त जी हैं । वाह भैया यह सब आप ही के दम का जखेड़ा है । अस्तु इन्हें भी छोड़ो । यह देखो पण्डितों का दल मुर्गे और बटेर की लड़ाई का मज़ा लिया चाहो तो ज़रा इन्हें छेड़ बैठो । आगे चलो देखो यह झुण्ड पौराणिकों का है "शास्त्रेण हीना कवयो भवन्ति काव्ये-न हीनाश्च पुराण भट्टाः" नमस्कार व्यास जी । "नमो व्यासाय महते" "जयतिपराशरसूनुः सत्यवती हृदयनन्दनो व्यासः" श्लोक गढ़ने वाला भूल गया "नव युवति हृदयनन्दनो व्यासः" कहना था । गोपियों में कन्हैया जो चैन इन्हें है सो किसी को न होगा दम्भ को सहारा देने वाले लम्पटता के सहकारी । अस्तु जाने दीजिये हमें क्या प्रयोजन जो इन के युवति प्रेम में बाधा छोड़ैं । देखो यह वैद्यों का दल है "शतमारी भवेद्वैद्यः" और यह गरोह हकीमों की है इन की लम्बी

डाढ़ी में तमाम तिल्ल भरा है। बगल में पंचाङ्ग दबाये यह समूह नक्षत्र सूचियों का है। काशीनाथ "अष्टवर्षा भवेद्गौरी" इन्ही के सहारे पर लिख गये हैं। ऐसे २ तो इस मजलिस में न जानिये कितने भरे हैं कहां तक गिनाते रहैं छोड़ये इन सबों को "कथापि खलु पापानामलमश्रेयसे यतः" यह देखिये दया दाक्षिण्य उदारभाव के साक्षात् मूर्ति नागरिक जनों के सिरताज सब गुन आगरी चातुरी जिस के रोम २ से टपक रही है अपने शुभागमन से इस मजलिस को सुशोभित करने को इधर ही आ रहे हैं चलो इन से मिलैं। इन्हें देखते ही सब लोग अपने २ कुचरित्रों पर लज्जित हो दबक कर बैठ गये और इन्ही ने कुछ कहना आरम्भ किया जिसे फिर लिखैंगे॥

प्राप्तग्रन्थ-दो मित्र।

एक कल्पित उपन्यास बालपुर निवासी पाण्डेय लोचन प्रसाद लिखित। इस में दो मित्रों की मनोहर कथा है बीच २ में सदुपदेश पूर्ण अंगरेज़ी के कोटेशनस श्लोक और कुण्डलिया आदि अच्छे ढङ्ग से दिये गये हैं। मुरादाबाद लक्ष्मीनारायण प्रेस की छपी यह पुस्तक है।

बालभारत दूसरा भाग।

ठाकुर सूर्य कुमार वर्मा रचित-इस में उपदेश पूरित महाभारत के प्रधान २ इतिहासों को सविस्तार ग्रंथकारने अच्छे ढङ्ग पर सुललित भाषा में लिखा है बालक ही क्या यह तो प्रौढ़ जनों को पढ़ने में लाभ दायक है। महाभारत को इस भांत खंड २ कर कई भाग में लिखने का क्रम हमारे मित्र का सराहने के योग्य है मूल्य ॥) इंडियन प्रेस प्रयाग में यह पुस्तक मुद्रित हुई है।

जीव दया।

खंडवा निवासी माणिक्य लाल जैन रचित यह पुस्तक एक अंगरेज़ी की किताब के आधार पर लिखी गई है। ये जैन महाशय हिन्दी के होन

हार सुलेखकों में हैं। नाम ही से सिद्ध है कि इस तरह की पुस्तक जैनी ही भाई के द्वारा निकल सक्ती है। पुस्तक बहुत ही शिक्षाप्रद है। यद्यपि ग्रंथकार ने अपनी सम्मति बहुत स्वतंत्रता पूर्वक दी है किन्तु जब हम विदेशियों के चंगुल में हैं तो केवल जीव दया ही पर सब कुछ निर्भर नहीं है। भाषा इस की सरल है पुस्तक संग्रह के योग्य है मूल्य।=) मिलने का पता मेनेजर स्वदेशोपकारक कार्यालय खंडवा।

एक लिपिविस्तार परिषत्।

कलकत्ते के मान्यवर महाशय जसटिस शारदा चरण मित्र का सदुद्योग कहां तक विस्तार पाया यह परिषत् के वार्षिक बिवरण से मालूम हो सक्ता है। नागराक्षर में बङ्ग भाषा की २ पुस्तक भी प्रकाशित हुई हैं एक हीरारमूल्य जो जासूसी ढङ्ग का एक उपन्यास है। प्रणेता इस के नगेन्द्रनाथ गुप्त हैं मूल्य ≡) है। दूसरी राज भक्ति यह भी एक रोचक उपन्यास है। दामोदर मुखोपाध्याय प्रणीत मूल्य ॥)

—:०:—

अलबेला रागिया ॥

जौनपुर निवासी गोपाल लाल खत्री रचित। ऐसा मालूम होता है उपन्यास रचयिता ने किसी खास घराने के कुचरित्र Currnption पर लक्ष्य कर लिखा है। और इतना खुल पड़े हैं कि कहीं २ कुछ अश्लीलता आ गई है। तौ भी उपन्यास रोचक है। गोपाल लाल को चाहिये अपने लेख में गम्भीरता संपादन करें तो हिन्दी के सुलेखकों में गिने जांय। मूल्य।=) भारत जीवन प्रेस में मुद्रित।

शरदाकाश ॥

पाण्डेय अनन्तराम लिखित।

अहो, शुभ्र आकाश शरद का, जग सुखकारी।
है वर्णन से दूर पराहत कला तुम्हारी ॥
तू अनन्त, गुण भी अनन्त तेरा, यह कहना।

स्थूल बुद्धि अस कहैं, नहीं जो पटु सुकल्पना ॥ १ ॥
भाव तुम्हारे दर्शन से जो २ हैं आये ।
मेरे मन में, आज मुझे वे अतिशय भाए ॥
किया चाहता हूं वर्णन उनका मैं क्रम से।
निज निर्मलता देकर मुझे बचाना भ्रम से ॥ २ ॥
वर्षा ऋतु के बाद रूप तू ने दिखलाया।
सचरा चर के मुख सरोज को सहज खिलाया ॥
जीव जन्तुओं का मन मधुकर चंचल होकर ।
उड़ने लगा स्वतंत्र कलेवर निज २ लेकर ॥ ३ ॥
तव स्वरूप का बड़ा उपासक बूढ़ा भारत।
आरति में भी करता है तेरा सुस्वागत ॥
दुख दुर्गति वह भूल आज आनन्द मगन हो,
जोर करोरो हाथ दंडवत करता तुझ को ॥ ४ ॥
नयन मनोहर वर्ण तुम्हारा है नीलाम्बर ।
विष्णु अंग को कहते हैं तुझ सा ही सुन्दर ॥
अतः करें जो विष्णु रूप से पूजा तेरी;
उक्ति नहीं होगी यह अनुचित कुछ भी मेरी ॥ ५ ॥
मारतंड औ चन्द्र तुम्हारे शीर्ष देश के।
हैं सुन्दर दो मुकुट सदन शुभगुण सुवेश के ॥
तेज पुंज है एक, दूसरा शीतलताधर ।
दिन रजनी के नायक और जगत् के हितकर ॥ ६ ॥
महाराज यडूवर्ड मुकुट मणि कोहनूर है ।
जिस के आगे अन्य नृपों का गर्व चूर है ॥
शरदाकाश, तुम्हारे इन मुकुटों की समता।
कोहनूर क्या, कौस्तुभ भी करने से हटता ॥ ७ ॥
है राजाओं का राजा तू इस प्रकार से ।